स्वामी दयानन्द का

वैदिक स्वराज्य

अन्य देशवासी राजा हमारे देश [illegible] कभी न हों, तथा हम पराधीन कभी न हों।

हे कृपासिन्धो भगवन्! हम पर सहायता करो जिससे सुनीति युक्त होके हमारा स्वराज्य अत्यन्त बढ़े। स्वामी दयानन्द

लेखक—चन्द्रमणि

विद्यालंकार, पालिरत्न.

॥ ओ३म् ॥

स्वामी दयानन्द

का

वैदिक स्वराज्य

(स्वराज्य विषयक स्वामी जी के अमूल्य संदेशों का संग्रह)

लेखक तथा प्रकाशक

श्री पं० चन्द्रमणि विद्यालंकार, पालिरत्न

पं० हरभगवान मैनेजर के प्रबन्ध से

बाम्बे मैशीन प्रेस लाहौर में मुद्रित।

प्रथमावृत्ति २०००]   फाल्गुन १९७८   [मूल्य ॥)

ग्रन्थकर्ता की पुस्तकें

१. महर्षि पतञ्जलि और तत्कालीन भारत । मू० ।≈)

२. वेदार्थ करने की विधि । मू० ॥≈)

दोनों पुस्तकों पर भारत के प्रसिद्ध पत्र माडर्नरिव्यू की यह सम्मति है:—

(क) हिन्दी साहित्य में इस प्रकार की पुस्तकें उसके भविष्य को शीघ्रगामी तथा कान्तियुक्त दर्शाती हैं । इस पुस्तक में ग्रन्थकर्ता ने बड़े ध्यान और प्रशंसनीय गवेषणा के साथ पतञ्जलि कृत महाभाष्यके पाठ से ऐतिहासिक सच्चाईयों पर पहुंचने का प्रयत्न किया है । साथ साथ वह तत्कालीन रीति रिवाज़ों पर भी बहुत कुछ प्रकाश डालने में कृतकृत्य हुए हैं । उस समय की संस्कृत भाषा की दशा दर्शाने का भाग बड़ा सुन्दर पाठ होगा । ग्रन्थकर्ताने कुछ एक सच्चाईयों पर बड़े वैज्ञानिक तरीके पर पहुंचने में जो परिश्रम किया है हम उसकी प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते । भाषा उत्तम है ।

(ख) ग्रन्थकर्ता ने वेदों का भाष्य करने के उपायों का संपूर्णता से वर्णन किया है । उनके निर्देश ठीक हैं, और पुस्तक से उत्तम पाण्डित्य (Scolar ship) अभिव्यक्त होता है । मि० चन्द्रमणि को पालि तथा संस्कृत में अच्छा प्रवेश है । और उनके दिये पक्ष प्रतिपक्षों तथा व्याकरण संबन्धि व्याख्यानों के पढ़ने में आनन्द आता है । वेदों से प्रेम रखने वालों के लिये निस्सन्देह यह पुस्तक अमूल्य होगी ।

३. स्वामी दयानन्द का वैदिक स्वराज्य । मू० ॥)

प्राप्तिस्थान—

पं० चन्द्रमणि विद्यालंकार पालिरत्न

फेन्टनगंज, जलन्धर शहर ।

* ओ३म् *

सूची पत्र।

नं०	विषय			पृष्ठ

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की

प्रस्तावना

पालिरत्न पं० चन्द्रमणि विद्यालंकार ने ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों से राज-प्रजा धर्म सम्बन्धी वाक्यों को उद्धृत कर और क्रमानुसार स्वराज्य का वैदिक स्वरूप दिखा कर आर्य भाषा भाषी प्रजा का बहुत उपकार किया है। वर्त्तमान राज-नैतिक आन्दोलन में आर्य समाजिस्थ सज्जनों को यह ग्रन्थ एक कोष का काम देगा। प्रमाणों पर अपनी टीका टिप्पणी का न चढ़ाना ही इस ग्रन्थ की अपूर्वता है। गुरुकुल के एक स्नातक ने अपने पढ़े पढ़ाए को सफल किया है, यह देख मुझे सन्तोष होता है।

श्रद्धानन्द संन्यासी

दिल्ली नगर
१० माघ, १९७८ वि०

* प्राक्कथन *

भारत का महाराजा दिलीप अपने प्राणों की भी परवाह न करता हुआ यह कहता था "क्षतात्किल त्रायत-इत्युदग्रः क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः। राज्येन किं तद्विप-रीतवृत्तेः प्राणैरुपक्रोशमलीमसैर्वा" अर्थात् "क्षत से दुःख से जो त्राण करे रक्षा करे वह क्षत्र है राजा है, इस प्रकार लोकों में उच्च क्षत्र शब्द प्रसिद्ध है। मैं क्षत्र (राजा) होता हुआ यदि नष्ट होती हुई गाय की रक्षा न करूं तो मेरे राज्य से क्या लाभ है ? एवं राजधर्म पालन न करने पर निन्दा से मलीन मेरे प्राणों से भी क्या लाभ है ?" संसार के प्रत्येक मनुष्य को ऐसे धर्मनिष्ठ राजा की आवश्यकता है स्वेच्छा-चारी अत्याचारी की नहीं। राजा का एक मात्र धर्म पुत्रों की न्याईं प्रजा का पालन, और धर्म की वृद्धि करना ही है। जो राजा अपना यह कर्तव्य पालन नहीं कर सकता, उसे राजा बनने का कोई अधिकार नहीं। यह धर्मराज्य यदि दुनिया में कहीं संभव हो सकता है तो वह वहीं संभव है जहां स्वराज्य हो। जहां स्वराज्य नहीं वहां पाप तो जड़ में ही रमा हुआ है उससे धर्म की वृद्धि कैसे हो सकती है। मनुष्य मात्र का सब से बड़ा धर्म मोक्ष प्राप्त करना है। तो, जिसने दुनियावी मोक्ष ही नहीं प्राप्त किया वह अन्तिम मोक्ष कैसे प्राप्त कर सकता है।

(२) स्वामी जी ने वेद की आज्ञानुसार प्रत्येक मनुष्य को स्वराज्य लाभ करने के अतिरिक्त चक्रवर्ती राज्य प्राप्त करने का भी आदेश किया है। चक्रवर्ती राज्य का यह अभिप्राय नहीं कि किसी जाति या देश का स्वराज्य नष्ट किया जावे। परन्तु भूगोल भर के सब से श्रेष्ठ मनुष्य को चक्रवर्ती राजा कुल दुनियां की प्रजा मिल कर चुनती है। कोई देश किसी के नीचे या ऊंचे नहीं, सब बराबर हैं। सब ने ही मिलकर किसी एक को चक्रवर्ती राजा चुना है। इससे प्रत्येक देश, या जाति यह कह सकती है कि हमारा चक्रवर्ती राज्य है। इसकी सविस्तर रचना प्रस्तुत ग्रन्थ में अंकित है।

(३) वैदिक स्वराज्य में सच्चे सन्यासी, या महात्मा की आज्ञा के आगे माण्डलिक राजाओं, तथा चक्रवर्ती राजा सब को शिर झुकाना पड़ता है। परन्तु आज कल के राजा मदमत्त हुए २ किसी भी महात्मा की आत्मिक आवाज़ को सुनने के लिये तय्यार नहीं। यदि राजा धर्मच्युत है, तो प्रजा को ऐसे राजा से किनारा करके अपना प्रजाधर्म अवश्य पालना चाहिए। यदि प्रजा प्रजाधर्म को ही पालन करें तो अधर्मी राजा अपने सिंहासनों से स्वयमेव डोल जावेगें। इस समय के सच्चे सन्यासी महात्मा गान्धी जी ने इसी धर्मपथ को स्वीकार किया है। यह एक आकस्मिक घटना है कि जिस धर्म-पथ को गुजरात भूमि में उत्पन्न स्वामी दयानन्द ने दर्शाया था, उसको गुजरात निवासी ही महात्मा गांधी ने अपनाया। ईश्वर पर पूर्ण विश्वास और भरोसा रखते हुए हमें प्रजाधर्म

पालते रहना चाहिए। बिना ईश्वर-विश्वास के हम एक पग भी न चल सकेंगे। मुझे यह सुन कर बड़ा खेद हुआ कि कहीं २ संग्रह समिति (कांग्रेस कमेटी) के प्रधान और सभासद भी इसमें विश्वास नहीं रखते। ऐसे अविश्वासियों को भी क्या अभी आस्तिकता का महत्त्व दर्शाने की आवश्यकता है। अभी हाल में जो मुम्बई में दुर्घटना घटी थी, वहां एक महात्मा गांधी जी के परमेश्वर-विश्वास ने वह करामात दिखाई जो कभी भुलाई नहीं जा सकती। यदि वैसे ही परमेश्वर-विश्वासी बन कर अन्य सब स्वराज्याभिलाषी कार्य संपादन करें तो वाञ्छित फल की प्राप्ति में कोई देर नहीं।

(४) इस स्वराज्य का नाद वर्तमान युग में सब से पूर्व स्वामी दयानन्द ने बजाया था। यह नाद उनकी अपनी मनघड़न्त कल्पना का परिणाम नहीं, परन्तु वह वेद का आदेश है, महाराजाधिराज और चक्रवर्तियों के चक्रवर्ती सार्व-भौम-राजा परमेश्वर की आज्ञा है। अतः उस महात्मा के संदेश प्रत्येक स्वराज्याभिलाषी भारतीय को बड़े ध्यान से अवश्य पढ़ने चाहिएं। इसी को दृष्टि में रख कर मैंने स्वामी जी के ऋग्वेद भाष्य, यजुर्वेद भाष्य, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, सत्यार्थ प्रकाश, संस्कारविधि, आर्याभिविनय ग्रन्थों तथा उनके जीवन चरित्र (श्री स्वामी सत्यानन्द जी लिखित) में से उन्हीं के वाक्य संगृहीत कर दिये हैं, जिससे पाठक पूरा २ लाभ उठा सकें। वेद भाष्य में जो स्वामी जी ने मंत्रों के भावार्थ आर्यभाषा में दिये हैं, उन्हीं का यहां मैंने संग्रह किया है। जहां

कहीं आर्य भाषा में छापे की अशुद्धियें रह गई हैं उन्हें मैंने संस्कृत में लिखित भावार्थ को देख कर ठीक कर दिया है। प्रत्येक वाक्य सन्दर्भ का पता सर्वत्र दिया गया है। जहां तीन अंक हों वहां ऋग्वेदभाष्य का मण्डल, सूक्त, मंत्र, तथा जहां दो हों वहां यजुर्वेद भाष्य का अध्याय, मंत्र समझिये। स्वामी जी का प्रत्येक शब्द विशेष महत्त्व रखता है अतः पाठकों को विशेष ध्यान से ही पुस्तक आद्योपान्त पढ़नी चाहिए। यदि इस छोटी सी पुस्तिका को जो स्वराज्याभिलाषी देवियों और सज्जनों की सेवा में ही समर्पित है उन्हों ने अपनाया तो मैं अपने को सफल मनोरथ समझूंगा।

फेन्टन गंज
जलन्धर शहर
३ माघ १९७८

चन्द्रमणि

* ओ३म् *

स्वामी दयानन्द
का
वैदिक स्वराज्य

* प्रथम खण्ड *

पहिला वर्ग

प्रजा पीड़क को राजा न मानो

आयद्वामीय चक्षसा मित्र वयं च सूरयः ।

व्यचिष्टे बहुपाय्ये यतेमहि स्वराज्ये ॥ ऋ. ५. ६६. ६

(ईय चक्षसा मित्र वां) विशाल दृष्टि वाले मित्रो राजा तथा राजपुरुषो ! तुम (वयं च सूरयः) और हम विद्वान् प्रजा जन (यत्) जो स्वराज्य है (व्यचिष्टे, बहुपाय्ये स्वराज्ये) उस विस्तृत, बहुतों की सहायता से संरक्षणीय स्वराज्य में (आयते महि) सब प्रकार से यत्न करें ।

यदजः प्रथमं संबभूव, स ह तत् स्वराज्य मियाय ।
यस्मान्नान्यत् परमस्ति भूतम् । अथर्व. १०. ७. ३१

(यत्) जब (अजः) कर्म योगी प्रजा गण (प्रथमं संबभूव) सब से प्रथम सङ्गठित होता है (तत्) तब (सः ह) वह ही प्रजागण (स्वराज्यं इयाय) स्वराज्य प्राप्त करता है, (यस्मात्) जिस स्वराज्य से (परं) श्रेष्ठ (अन्यत् भूतं न अस्ति) अन्य कोई वस्तु नहीं है ।

* * * * * *

(१) मनुष्यों को सब जगत् के उत्पन्न करने वाले निराकार सर्वव्यापी सर्वशक्तिमान् सच्चिदानन्दादि लक्षण युक्त परमेश्वर, और प्रजापालन में तत्पर धार्मिक सभापति, तथा धार्मिक प्रजाजन समूह ही का सत्कार करना चाहिये, उनसे भिन्न और किसी का नहीं । ४. २५

(२) मैं ईश्वर सब मनुष्यों को आज्ञा देता हूं कि तुम लोग मेरे तुल्य धर्मयुक्त गुण कर्म स्वभाव वाले पुरुष ही की प्रजा होवो, अन्य किसी क्षुद्राशय पुरुष की प्रजा होना स्वीकार कभी मत करो । जैसे मुझ को न्यायाधीश मान मेरी आज्ञा में वर्त अपना सब कुछ धर्म के साथ संयुक्त कर के इस लोक और परलोक के सुख को नित्य प्राप्त होते रहो, वैसे जो पुरुष धर्मयुक्त न्याय से तुम्हारा निरन्तर पालन करे उसी को सभापति राजा मानो । ६. २१

(३) जो राजा सब प्रजाओं को अच्छे प्रकार बढ़ावे तो उस को भी प्रजाजन क्यों न बढ़ावें । और जो ऐसा न करे तो उसको प्रजा भी कभी न बढ़ावे । ६. ३१

(४) वही राजा है जो न्याय को बढ़ाने वाला हो। वही विद्वान् है जो विद्या से न्याय को जनाने वाला हो। किन्तु वह राजा नहीं जो कि प्रजा को पीड़ा दे। और वह विद्वान् भी नहीं जो दूसरों को विद्वान् न करे। एवं वे प्रजाजन भी नहीं जो नीतियुक्त राजा की सेवा न करें। १७ १५

(५) सब सभाओं के अधिष्ठाताओं के सहित सब सभासद् उस पुरुष को राज्य का अधिकार देवें कि जो पक्षपाती न हो। जो पिता के समान प्रजाओं की रक्षा न करें उन को प्रजा लोग भी कभी न मानें। और जो पुत्र के तुल्य प्रजा की न्याय से रक्षा करें उन के अनुकूल प्रजा निरन्तर हो। १७. २४

(६) जो राजा प्रिय अप्रिय को छोड़ न्याय धर्म से समस्त प्रजा का शासन करके, सब राज कर्मों में चार रूप आंखों वाला—अर्थात् राज्य के गुप्त हाल को देने वाले दूत ही जिस के नेत्र के समान हों वैसा होकर, मध्यस्थ वृत्ति से सब प्रजाओं का पालन करके निरन्तर विद्या की शिक्षा को बढ़ावे वही सब का पूज्य होवे। २०. १०

(७) जो सभापति और सेनापति आदि राज पुरुष प्रीति और विनय से प्रजा की पालना करें तो प्रजा भी उनकी रक्षा अच्छे प्रकार करे। १. ४६. १५

(८) मनुष्यों को योग्य है कि जो बहुत गुणों के योग से सूर्य के सदृश तेज युक्त राजा हो उसी का सत्कार सदा किया करें। १. ५१. १

(६) मनुष्यों को योग्य है कि जो राज्य की रक्षा करने में समर्थ न होवे उस को राजा कभी न बनावें। १. ५४. ७

(१०) मनुष्यों को उचित है कि अधर्मी मूर्खजन को राज्य की रक्षा का अधिकार कदापि न देवें। १. ६०. ४

(११) मनुष्यों को उचित है कि पहिले परीक्षा किये हुए, पूर्ण विद्या युक्त, धार्मिक, सब का उपकार करने वाले प्राचीन पुरुष को सभा का अधिपति करें। तथा इस से विरुद्ध मनुष्य को स्वीकार नहीं करें। १. ६१. २

(१२) हे विद्वान् राजन् ! आप श्रेष्ठ गुण कर्म स्वभाव से युक्त होकर प्रजा पालन में तत्पर, सुशील, और इन्द्रियों के जीतने वाले जब तक होंगे तब तक हम लोग आप को मानेंगे। ६. ४५. १०

(१३ हे प्रजाजनो ! जो सम्पूर्ण विद्या और श्रेष्ठ गुण कर्म स्वभाव वाला निरन्तर न्याय से प्रजाओं के पालन में तत्पर होवे उसी को राजा मानो दूसरे क्षुद्राशय को नहीं। ६. ४५. १६

——:०:——

दूसरा वर्ग

औरों का राज्य छीनने वाले आदि चोर हैं

(१) चोर अनेक प्रकार के होते हैं:— कोई डाकू, कोई कपट से हरने वाले, कोई मोहित करके दूसरों के पदार्थों को ग्रहण करने वाले, कोई रात में

सुरंग लगा कर ग्रहण करने वाले, कोई उत्कोचक अर्थात् हाथ से छीन लेने वाले, कोई नाना प्रकार के व्यवहारी दुकानों में बैठ छल से पदार्थों को हरने वाले, कोई शुल्क अर्थात् रिशवत लेने वाले, कोई भृत्य होकर स्वामी के पदार्थों को हरने वाले, कोई छल कपट से औरों के राज्य को स्वीकार करने वाले, कोई धर्मोपदेश से मनुष्यों को भ्रमा कर गुरु बन शिष्यों के पदार्थों को हरने वाले, कोई प्राड्विवाक अर्थात् वकील होकर मनुष्यों को विवाद में फंसा कर पदार्थों को हर लेने वाले, और कोई न्यायासन पर बैठ प्रजा से धन लेके अन्याय करने वाले इत्यादि सब को चोर जानो। इन को सब उपायों से निकाल कर मनुष्यों को धर्म से राज्य का पालन करना चाहिए। १. ४२. ३.

न्यायानुसार राजसंबन्धि भी दण्डनीय होवें,

(२) न्याय करने वाले मनुष्यों को उचित है कि किसी अपराधी चोर को दण्ड दिये बिना छोड़ना कभी न चाहिये। नहीं तो प्रजा के पीड़ा युक्त होकर नष्ट भ्रष्ट होने से राज्य का नाश होगा। इस कारण प्रजा की रक्षा के लिये दुष्ट कर्म करने वाले अपराधी माता पिता आचार्य और मित्र आदि को भी अपराध के योग्य ताड़ना अवश्य देनी चाहिये। १. ४२. ४.

(३) हे राजन्! यदि अपना पुत्र भी बुरे लक्षणों वाला हो तो वह अधिकार देने योग्य नहीं। ४. १६. ६.

दुष्ट राजा को प्रजा दण्ड दे, तथा राज्यच्युत करे

(४) प्रजाजनों को चाहिए कि जो विद्वान्, इन्द्रियों को जीतने वाला, धर्मात्मा, और जैसे पिता अपने पुत्रों को वैसे प्रजा की पालना करने में अतिचित्त लगावे, और सब के लिये सुख करने वाला सत्पुरुष हो उसी को सभापति करें। और राजा वा प्रजाजन कभी अधर्म के कामों को न करें। जो किसी प्रकार कोई करे तो अपराध के अनुकूल प्रजा राजा को, और राजा प्रजा को दण्ड देवे। किन्तु कभी अपराधी को दण्ड दिये बिना न छोड़े, और निरपराधी को निष्प्रयोजन पीड़ा न देवे। इस प्रकार सब कोई न्यायमार्ग से धर्माचरण करते हुए अपने २ प्रत्येक कामों के चिन्तन में रहें, जिससे थोड़ी प्रीति रखने वाले (अमित्र), सर्वथा प्रीति न रखने वाले (उदासीन) तथा शत्रु अधिक न हों, और विद्या तथा धर्म के मार्गों का प्रचार करते हुए सब लोग ईश्वर की भक्ति परायण हो के सदा सुखी रहें। ८. २३.

(५) हे राजन्! जो आप दुर्व्यसनों का त्याग कर के धर्म-संबन्धि कर्मों को करें तो हम लोग आप के भक्त निरन्तर होवेंगे। यदि अन्याय करोगे तो आप का शीघ्र त्याग करेंगे। ४. ४. ६.

(६) हे गृहस्थ लोगो! चाहे वह राजा का ज्येष्ठ पुत्र क्यों न हो परन्तु ऐसे दोष वाले (अब्रह्मचर्य, शिकार, चौपड़ आदि जूआ, मद्यपान, नाचना, पक्षपात से किसी को दण्ड देना, लोभ आदि) मनुष्य को राजा कभी न करना। यदि

भूल से हुआ हो तो उसको राज्य से च्युत करके किसी योग्य पुरुष को जो कि राजा के कुल का हो राज्याधिकारी करना। तभी प्रजा में आनन्द मंगल सदा बढ़ता रहेगा। संस्कार.१८८ पृ.

अन्यायकारी राजा कभी न हो

(७) जो अन्यायकारी मनुष्य है उसको हम आशीर्वाद नहीं देते। दुष्ट, पापी, ईश्वर भक्ति रहित मनुष्य का बल और राज्यैश्वर्यादि कभी मत बढ़े, उस का पराजय ही सदा हो। हे बन्धुवर्गो! आओ हम सब मिल के सर्व दुःखों के विनाश और विजय के लिये ईश्वर को प्रसन्न करें, जो हम को वह ईश्वर आशीर्वाद देवे जिस से हमारे शत्रु कभी न बढ़ें। आ० वि० १. २२.

* द्वितीय खण्ड *

प्रजापालन बिना कर नहीं

(१) राज्य का आचरण करते हुए राजा को प्रजा लोग प्राप्त होकर अपने पदार्थों का कर चुकावें। और वह राजा उन प्रजाओं की रक्षा करने के लिये सिंह और सूकर वा अन्य दुष्ट जीव, तथा डाकू, चोर, उठाई गीरे, और गांठ कटे आदि दुष्ट जनों को वश में कर अपनी प्रजा को यथा योग्य धर्म में प्रवृत्त करे। ६. ६

(२) राजा और राज पुरुष अनीति से प्रजा जनों का कर न लेवें। किन्तु राज्य पालन के लिये राज पुरुष प्रतिज्ञा करें कि हम लोग अन्याय न करेंगे--अर्थात् हम सर्वदा तुम्हारी रक्षा, और डाकू चोर लम्पट लवाड़ कपटी कुमार्गी अन्यायी और कुकर्मियों को निरन्तर दण्ड देवेंगे। ६. २२

(३) प्रजा जनों को योग्य है कि सभाध्यक्ष को प्राप्त होकर उसके लिये अपने समस्त पदार्थों से यथायोग्य भाग दें। जिस कारण राजा प्रजा पालन के लिये संसार में उत्पन्न हुआ है इसी से राज्य करने वाला यह राजा संसार के पदार्थों का अंश लेने वाला होता है। ६. ३०

(४) जो ये राजपुरुष हम लोगोंसे कर लेते हैं वे हमारी निरन्तर रक्षा करें, नहीं तो न लें, और हम भी उनको कर न दें। इस कारण प्रजा की रक्षा, और दुष्टों के साथ युद्ध करने

के लिये ही कर देना चाहिए अन्य किसी प्रयोजन के लिये नहीं–यह निश्चित है। ६. १७

(५) यदि राजा न्याय से प्रजा की रक्षा न करे और प्रजा से कर लेवे तो जैसे २ प्रजा नष्ट हो वैसे राजा भी नष्ट होता है। यदि विद्या और विनय से प्रजा की भली भान्ति रक्षा करे तो राजा और प्रजा सब ओरसे वृद्धि को पावें। २३. २२

(६) जो राजा प्रजा से कर लेकर पालन न करे तो वह राजा डाकुओं के समान जानना चाहिए। तथा जो पालन की हुई प्रजा राज भक्त न हो तो वह भी चोर के तुल्य जाननी चाहिए। इसी लिये प्रजा राजा को कर देती है कि जिस से वह हमारा पालन करे। और राजा इसीलिये पालन करता है कि जिस से प्रजा मुझ को कर देवे। १. ११४. ३

(७) जो राजा प्रजा पालन के विना कर लेता है, जिस राजा की प्रजा को दुष्ट जन दुःख देते हैं, और जो राजा आप नीच कर्म करने वाला, बाज पक्षि के सदृश हिंसक, पशु के सदृश मूर्ख है, और जिस राजा की सेना चोर के सदृश वर्तमान है उसका शीघ्र विनाश होता है यह निश्चय है।४.३८.५

(८) जैसे खेती करने वाले लोग परिश्रम के साथ पृथिवी से अनेक फलों को उत्पन्न और संरक्षण करके भोगते और असार को फैंकते हैं और जैसे यथा विहित भाग राजा को देते हैं वैसे ही राजा आदि राज पुरुषों को चाहिए कि अत्यन्त परिश्रम से इनकी रक्षा करके न्यायाचरण से ऐश्वर्य को उत्पन्न कर और सुपात्रों को देते हुए आनन्द को भोगें। १०. ३२

* तृतीय खण्ड *

पहिला वर्ग

राजा प्रजासम्मत हो

(१) प्रजा जनों को यह उचित है कि आपस में सम्मति करके किसी उत्कृष्ट गुणयुक्त सभापति को राजा मानकर राज्य पालन के लिये कर देकर न्याय को प्राप्त हों ६. २७

(२) हे विद्वन् राजन् ! जिस अधिकार में आपको हम लोग स्थापित करते हैं उस अधिकार को धर्म और पुरुषार्थ से यथावत् सिद्ध कीजिए। ३४. १५

(३) जो इन्द्र, वायु, यम, सूर्य, अग्नि, वरुण, चन्द्र और धनाढ्य (विसेशा=कुबेर) के गुणों से युक्त, विद्वानों का प्रिय, विद्या का प्रचार करने वाला, सब को सुख देवे उसी को राजा मानना चाहिए। ६. ३२

कैसा राजा चुनें

(४) प्रजा जनों को उचित है कि सकल शास्त्र का प्रचार होने के लिये सब विद्याओं में कुशल, और अत्यन्त ब्रह्मचर्य के अनुष्ठान करने वाले पुरुष को सभापति करें। और वह सभापति भी परम प्रीति के साथ सकल शास्त्र का प्रचार करता कराता रहे। ७. २३

(५) प्रजाजनों को योग्य है कि जो सर्वोत्तम, समस्त विद्याओं में निपुण, सकल शुभ गुण युक्त, विद्वान्, शूरवीर

हो उसी को सभा के मुख्य काम में स्थापन करें। और वह सभा के सब कर्मों में नियुक्त सभापति सत्य न्याय युक्त धर्म कार्य से प्रजा के बल की उन्नति करे। ७ ३६

६) सभाजन और प्रजाजनों को चाहिये कि जिस की पुण्य प्रशंसा, सुन्दर रूप, विद्या, न्याय, विनय, शूरता, तेज, अपक्षपात, मित्रता, सब कामों में उत्साह, आरोग्य बल पराक्रम, धीरज, जितेन्द्रियता, वेदादि शास्त्रों में श्रद्धा, और प्रजा पालन में प्रीति हो उसी को सभा का अधिपति राजा मानें। ८. ४६

(७) ईश्वर की आज्ञा है कि सब मनुष्य रक्षा आदि के लिये ब्रह्मचर्य व्रतादि से विद्यापारग विद्वानों के बीच जिस न ४८ वर्ष ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया हो ऐसे राजा को स्वीकार कर के सच्ची नीति को बढ़ावें। ६. २६

(८) मनुष्यों को योग्य है कि ईश्वर प्रेमी, बल पराक्रम पुष्टि युक्त, चतुर, सत्यवादी, जितेन्द्रिय, धर्मात्मा, प्रजापालन में समर्थ विद्वान् को अच्छे प्रकार परीक्षा कर सभा का स्वामी बनाने के लिये अभिषेक करके राज्य धर्म की उन्नति भली प्रकार नित्य किया करें। ६. ३०

(६ जो राजा सब का पोषक, समस्त विद्याओं में कीर्ति सम्पन्न, ऐश्वर्य युक्त, सभा के कामों में चतुर, पशुओं का रक्षक, और मेद्रों का ज्ञाता हो उसी को राजा प्रजा और सेना के सब मनुष्य अपना अधिष्ठाता बना कर उन्नति देवें। ६. ३२

(१०) हे मनुष्यो ! तुम लोग जो दरिद्रों को भी धन युक्त, आलसियों को पुरुषार्थी, और श्रवण रहितों को श्रवण युक्त करे उस पुरुष ही को सभा आदि का अध्यक्ष करो। हे सभापते ! यहां आप हमारी बात को सुनोगे, और हम आप की बात को सुनेंगे, ऐसी आशा हम करते हैं। १. ८४. ६

(११) जो मनुष्य सूर्यादि गुणों से युक्त पिता के समान रक्षा करने हारा हो वह राजा होने के योग्य है। और जो पुत्र के समान वर्तमान हो वह प्रजा होने योग्य है। १०. ३०

(१२) जो सूर्य के समान श्रेष्ठ गुणों से प्रकाशित, सत्पुरुषों की शिक्षा से उत्कृष्ट, बुरे व्यसनों से अलग, सत्य न्याय से प्रकाशित, सुन्दर अवयव वाला, सर्वत्र प्रसिद्ध, सब से सत्कार करने योग्य, सब व्यवहारों का ज्ञाता, और दूतों के द्वारा सब मनुष्यों के हार्दिक आशय को जानने वाला शुद्ध न्याय से प्रजाओं में प्रवेश करता है वही पुरुष राजा होने के योग्य होता है। १२. १३

(१३) सब मनुष्यों को उचित है कि जो सुपात्रों को दान देने वाला, धन का व्यर्थ खर्च न करने वाला, तथा सब को विद्या बुद्धि देने हारा हो, जिस ने ब्रह्मचर्याश्रम सेवन किया हो, अपने इन्द्रिय जिस के वश में हों, जो योग के यम आदि आठ अङ्गों के सेवन से प्रकाशमान सूर्य के समान अच्छे गुण कर्म स्वभाव से सुशोभित हो, और जो पिता के समान अच्छे प्रकार प्रजाओं का पालन करने हारा पुरुष हो उसको राज्य करने के लिये स्थापित करें। १२. २२

(१४) जैसे माता गर्भ की रक्षा करती है वैसे जो प्रजा का पालने हारा विद्वान् पुरुष हो उस को राज्याधिकार देना चाहिए। १२. २३

(१५) मनुष्यों को चाहिये कि जो सब विद्याओं में गम्भीर बुद्धिवाला, सब मनुष्यों में माननीय, प्रजा की रक्षा आदि राज्य कार्य का स्वीकार कर्ता, सब सुखों का दाता, और वेदादि शास्त्रों का जानने वाला शूरवीर हो उसी को राजा करें। ३३. १६

(१६) मनुष्यों को चाहिये कि जैसे सूर्य पृथिव्यादिकों से गुण तथा परिमाण में अधिक है वैसे ही उत्तम गुण युक्त सभा आदि के अधिपति राजा को अधिकार देकर सब कार्यों की सिद्धि करें। १. ६१. ६

(१७) वही राजा होने योग्य है कि जिसको समस्त प्रजाजन स्वीकार करें। २. १. ८

(१८) जैसे गुण का ग्रहण करने वाले उत्तम गुणी विद्वान् का सेवन करते हैं, वैसे न्याय करने में चतुर राजा का सेवन प्रजाजन करते हैं। इसी से परस्पर की प्रीति से सब की उन्नति होती है। ६. ७

(१६) राजजनों और प्रजाजनों को चाहिये कि सब के रक्षण के लिये सब से उत्तम गुण कर्म स्वभाव वाले राजा का स्वीकार करें। और वह राजा सब की सम्मति से सत्य न्याय का निरन्तर आचरण करे। ६. १६. ११

दूसरा वर्ग ।

(१) प्रजाजनों को चाहिए कि अपने बचाव और दुष्टों के निवारणार्थ, विद्या और धर्म की प्रवृत्ति के लिये, अच्छे स्वभाव वाले, विद्या और धर्म के प्रचार करने हारे, वीर, जितेन्द्रिय, सत्यवादी, सभा के स्वामी राजा का स्वीकार करें । ६. ३८.

राजा चुनने का उद्देश्य

(२) इस सृष्टि में सब मनुष्यों को चाहिए कि विद्वान् और अन्य सब श्रेष्ठ चतुर पुरुष मिलकर जिस विचार शील, ग्रहण के योग्य वस्तुओं को प्राप्त कराने वाले, शुभ गुणों से भूषित, विद्या सुवर्णादि धनयुक्त, सभा के योग्य (सभासद्) पुरुष को राज्य शासन के लिये नियुक्त करें वही पिता के तुल्य पालना करने वाला राजा होवे । १. ३६. १०.

राजा राज्यसभा का एक सभासद है

(३) यदि मनुष्य अच्छे सुशिक्षित होकर औरों को सुशिक्षित करें, उनमें से उत्तमों को सभासद्, और सभासदों में से अत्युत्तम को सभापति बना कर राजा तथा प्रजा के प्रधान पुरुषों की एक अनुमति से राजकार्यों को सिद्ध करें तो सब आपस में अनुकूल होकर सब कार्यों को पूर्ण करें । २६. १६.

(४) जहां विद्वान् सभाध्यक्ष, तथा सेनाध्यक्ष सभा में रहने वाले सभासद् और भृत्य होकर विनय पूर्वक न्याय करते हैं वहां सुख का नाश कभी नहीं होता । १. ४१. ५.

राजा प्रजा का भृत्य है

(५) इस संसार में किसी मनुष्य को विद्या के प्रजा मात्र को स्वदेशी प्रकाश का अभ्यास, अपनी स्वतंत्रता राज्य चाहिए और सब प्रकार से अपने कामों की उन्नति को न छोड़ना चाहिए। ५. ४३.

(६) मनुष्यों को चाहिए कि पुरुषार्थ करने से पराधीनता छुड़ाके स्वाधीनता का निरन्तर स्वीकार करें। १५. ५.

(७) कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम है। और मत मतान्तर के आग्रह रहित, अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजापर पिता माता के समान कृपा न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है। सत्यार्थ० २३७ पृ०

—:०:-

* चतुर्थ खण्ड *

पहिला वर्ग

राजधर्म

राज पुरुष प्रतिज्ञा कभी न तोड़ें

(१) राजा, उसके नौकर (अमात्यादि राजभृत्य) और प्रजा पुरुषों को उचित है कि अपनी प्रतिज्ञा और वाणी को असत्य होने कभी न दें। जितना कहें उतना ठीक २ करें। जिसकी वाणी सब काल में सत्य होती है वही पुरुष राज्याधिकार के योग्य होता है। जब तक ऐसा नहीं होता तब तक उन राजा और प्रजापुरुषों का परस्पर में विश्वास नहीं होता, और नाहीं वे सुखों के बढ़ाने वाले हो सकते हैं। ६. १२.

(२) राजा कभी झूठी प्रतिज्ञा करने और कटुवचन बोलने वाला न हो, तथा न किसी को ठगे। यदि यह राजा अन्याय करे तो आप भी प्रजाजनों से ठगा जावे। २३. २३.

अनाथादि का पालन करे

(३) जो राजा अनाथ अन्धादिकों का निरन्तर पालन करे तो उसका राज्य और सुख कभी नहीं नष्ट होवे। ४. ३०. १६.

राज पुरुष योग विद्या अवश्य सीखें

(४) योग विद्या के बिना कोई भी मनुष्य पूर्ण विद्वान् नहीं हो सकता। और न पूर्ण विद्या के बिना अपने स्वरूप और परमात्मा का ज्ञान कभी हो सकता है। और न

इसके बिना कोई न्यायाधीश सत्पुरुषों के समान प्रजा की रक्षा कर सकता है। इस लिये सब मनुष्यों को उचित है कि योग विद्या का सेवन निरन्तर किया करें। ७. २८.

(५) ईश्वर का आश्रय न करके कोई भी मनुष्य प्रजा की रक्षा नहीं कर सकता। जैसे ईश्वर सनातन न्याय का आश्रय करके सब जीवों को सुख देता है वैसे ही राजा को भी चाहिए कि प्रजा को अपनी न्याय व्यवस्था से सुख देवे। ७ ३६.

ईश्वराराधन के बिना सुराज्य नहीं हो सकता

(६ परमेश्वर से प्रीति और सत्याचरण के बिना कोई भी मनुष्य ईश्वर के गुण कर्म स्वभाव को देखने के योग्य नहीं हो सकता। न वैसे हुए विना राज्य कर्मों को यथार्थ न्याय से संपादन कर सकता है। नाही सत्य धर्माचरण से रहित जन राज्य बढ़ाने को कभी समर्थ हो सकता है। ६. ४.

(७) जो राज्य के अधिकारी पुरुष और उनकी स्त्रियां हों उनको चाहिए कि अपनी उन्नति के लिये दूसरों की उन्नति को सहके सब मनुष्यों को राज्य के योग्य करें और आप भी चक्रवर्ती राज्य का भोग किया करें। ऐसा न हो कि ईर्ष्या से दूसरों की हानि करके अपने राज्य का भङ्ग करें। १०. ३.

राजपुरुष दूसरों का राज्य न छीनें अन्यथा अपना राज्य नष्ट करेंगे

(८) हे स्त्री पुरुषो! जो मनुष्य सूर्य के समान न्याय और

औरों को स्वराज्य कौन दे सकते हैं

विद्या का प्रकाश कर सबको आनन्द देने हारे, गौ आदि पशुओं की रक्षा करने वाले, शुभ गुणों से शोभायमान, बलवान्, अपने तुल्य स्त्रियों से व्याहे हुए, और संसार का पोषण करने वाले, स्वाधीन हैं, वे ही औरों के लिये राज्य देने और आप सेवन करने के समर्थ होते हैं अन्य नहीं। १०. ४.

का सत्कार करें

(९ सभापति आदि राजपुरुषों को चाहिए कि सेना पति की न्याई सैनिकों अन्नादि पदार्थों से जैसा सत्कार सेनापति का करें वैसा ही सेना के भृत्यों का भी करें। १६. ८.

व्यभिचारी राजपुरुष शूद्र हैं

(१०) जो राजा पशु के समान व्यभिचार में वर्तमान हुआ २ प्रजा की पुष्टि को नहीं करता, वह धनाढ्य होती हुई शूद्र कुल की स्त्री जो कि जारकर्म करती हुई दासी है उसके समान शीघ्र रोगी होकर अपनी पुष्टि का विनाश करके धनहीनता से दरिद्र हुआ मरता है। इससे राजा न कभी ईर्ष्या, और न व्यभिचार का आचरण करे। २३. ३०.

(११) जो राजा और राजपुरुष परस्त्री और वेश्या गमन के लिये पशु के समान अपना वर्ताव करते हैं उन को सब विद्वान् शूद्र के समान जानते हैं। २३. ३१

(१२) राज पुरुषों को योग्य है कि भोजन, वस्त्र, और खाने पीने के पदार्थों से शरीर के बल को उन्नति देवें, किन्तु

व्यभिचारादि दोषों में कभी न प्रवृत्त होवें, और परमेश्वर की उपासना भी यथोक्त व्यवहारों में करें। ८. ३१

अल्प कर लाभ में भी प्रजा से न्याय प्रीति

(१३) जैसे एक दूसरे से प्रीति रखने वाली मछलियें छोटी भी तालतलैया में निरन्तर वसती हैं वैसे राजा और राजपुरुष थोड़े भी कर के लाभ में न्याय पूर्वक प्रीति के साथ बर्तें। और यदि दुःख को दूर करने वाली प्रजा के थोड़े बहुत उत्तम काम की प्रशंसा करें तो वे दोनों प्रजाजनों को प्रसन्न कर अपने में उन से प्रीति करावें। २३. २८

(१४) हे राजन्! जो आप पक्षपात छोड़ के ईश्वर के तुल्य न्यायाधीश होवें, और यदि कदाचित् हम लोग कर भी न देवें तो भी हमारी रक्षा करें तो आप के अनुकूल हम सदा रहें। २७. ३५

छली कपटी का राज्य नहीं रह सकता

(१५) क्योंकि छली कपटी लोगों का राज्य स्थिर कभी नहीं होता इस से सब को छलादि दोष रहित विद्वान् होके शत्रुओं की माया में न फंस के राज्य का पालन करने के लिये अवश्य उद्योग करना चाहिए। १. ३३. ११

दूसरा वर्ग।

(१) हे विद्वन्! (राजन्!) संग्राम में जैसे कवच से शरीर संरक्षित किया जाता है वैसे न्याय से प्रजाजनों की

रक्षा कीजिए। और युद्ध में स्त्रियों को न मारिये। जैसे धनी पुरुषों की स्त्रियें नित्य आनन्द भोगती हैं वैसे ही प्रजाजनों को आनन्दित कीजिए। १. १४०. १०

(२) जब किसी राजपुरुष से अन्याय से पीड़ा को प्राप्त हुआ २ प्रजा पुरुष सभा के बीच अपने दुःख का निवेदन करे तब राजा उस के हृदय शल्य को उखाड़ देवे, अर्थात् उस के मन की शुद्ध भावना करा देवे। जिस से राज पुरुष न्याय से वर्तें और प्रजाजन भी प्रसन्न हों। १. १७१. ४

(३) राजा को यह अतियोग्य है कि जो प्रजा कहे उसे ध्यान से सुने जिस से राजा और प्रजाजनों का विरोध न होवे और प्रतिदिन सुख बढ़े। ६. २६. १

(४) वही राजा वीर वा उत्तम है जो धार्मिक जनों को अदण्ड्य कर दुष्टों को दण्ड दे। ७. ४६. ४

(५) हे राजन्! यदि आप हम विद्वानों की सम्मति में रह कर राज्य शासन करें, वा जो कोई प्रजाजन स्वकीय सुख दुःख प्रकाश करने वाले वचन को सुनावे उस सब को सुनकर यथावत् समाधान दें तो आप को हम सब लोग जैसे गौ दूध से वैसे राज्यैश्वर्य से उन्नत करें। ७. २४. ४

(६) ईश्वर उपदेश करता है कि राजा प्रजा और सेना जनों से सदा सत्यप्रिय वचन कहे, उन को धन दे, उन से धन ले, शरीर तथा आत्मा का वल बढ़ा और नित्य शत्रुओं को जीत कर धर्म से प्रजा को पाले। ६. २८

(७) हे राजन्! जो आप को अधर्म से हटा कर धर्म के

अनुष्ठान में प्रेरणा करें उन्हीं का सङ्ग सदा करो औरों का नहीं । ६. ३६

(८) यदि उपदेशक और राजपुरुष सब प्रजा की उन्नति किया चाहें तो प्रजा के मनुष्य राजा और राजपुरुषों की उन्नति करने की इच्छा क्यों न करें । १०. १८

(६) सेनापति आदि राजपुरुषों का यही मुख्य कर्तव्य है कि जो ग्राम और वनों में चोर, लुटेरे, तथा अन्य पापी पुरुष हैं उनको राजा के आधीन करें । ११. ७६

(१०) राजपुरुषों को चाहिये कि पुरुषार्थियों का उत्साह के लिये सत्कार, प्राणियां के ऊपर दया, अच्छी शिक्षित सेना को रखना, चोर आदि को दण्ड, सेवकों की रक्षा, और वनों का न काटना—इस सब को कर राज्य की वृद्धि करें ।१६. २०

(११) राजपुरुषों का धर्म युक्त पुरुषार्थ वही है जिस से प्रजा की रक्षा और दुष्टों का मारना हो । इस लिये श्रेष्ठ वैद्य लोग (Health Officers) सब के आरोग्य तथा स्वतन्त्रता के सुख की उन्नति करें जिस से सब सुखी हों । १६. ५०

(१२) जो राजपुरुष कृषि आदि कर्म करने, राज्य में कर देने हारे, और परिश्रम करने वाले मनुष्यों को प्रीति से रखते और सत्य उपदेश करते हैं वे इस संसार में सौभाग्य वाले होते हैं । १६. ६

(१३) जो अपने अङ्गों के तुल्य प्रजा को जाने वही राजा सर्वदा बढ़ता रहता है ।. २०. ८

(२५) सभापति राजा अपने राज्य के उत्कर्ष से सब जनों को विद्यादि शुभ गुण कर्मों में सुशिक्षित बना के निरालस्य करता रहे जिस से वह पुरुषार्थी होकर धनादि पदार्थों को निरन्तर बढ़ावें। ६ ३३

(२६) जैसे ईश्वर सर्वसुहृद् पक्षपातरहित है वैसे सभापति राज्यधर्मानुवर्ती राजा होकर प्रशंसनीय की प्रशंसा, निन्दनीय की निन्दा, दुष्ट को दण्ड, श्रेष्ठ की रक्षा करके सब का अभीष्ट सिद्ध करे। ६. ३७

(२७) न्यायाधीश राजा को चाहिए कि धर्म से यज्ञ करने वाले सत्पुरुष पुरोहित के समान प्रजा का निरन्तर पालन करें। ७ १८

(२८) जैसे अपने २ कामों में प्रवृत्त हुए अंतरिक्षादिकों में सब पदार्थ हैं वैसे राज सभासदों को चाहिए कि अपने २ न्याय मार्ग में प्रवृत्त रहें। ७. १९

(२९) सभापति राजा को योग्य है कि सत्य न्याययुक्त प्रिय व्यवहार से सभा, सेना, और प्रजाजनों की रक्षा करके उन सभों को उन्नति देवे। और अति प्रबल वीरो को सेना में रक्खे जिस से कि बहुत सुख बढ़ाने वाले राज्य से पृथिव्यादि पदार्थों के सुख को प्राप्त होवें। ७. २९

(३०) जैसे जीव प्रेम के साथ अपने मित्र वा शरीर की रक्षा करता है वैसे ही राजा प्रजा की पालना करे। और जैसे सूर्य वायु और बिजुली के साथ मेघ का भेदन कर जल से सब को सुख देता है वैसे राजा को चाहिए कि युद्ध की

स्वामी द्रोह और शत्रुओं को मारकर प्रजा का सुख, धर्मात्माओं को निर्भयता और दुष्टों को भय दे। ७ ३७

(३१) जो राजा वा राजपुरुष प्रजाओं को सन्तुष्ट कर, मंगल आचरण करते हुए, तथा सत्य विद्या और न्याय के प्रेमी, रहते हुए प्रजाओं की रक्षा करें वे सत्य [illegible] में प्रवृत्त कीर्ति वाले होवें। २७. ७

(३२) राजा जैसा अपने लिये आनन्द चाहे वैसा राजप्रजाजनों के लिये भी चाहे। ३२ ७०.

(३३) हे राजन्! जिस आप राजा के [illegible] राज्य रक्षक, तथा सेवक आर्य हैं जो धनादि कर का अदाता शत्रु है उससे भी जिन आपने धनादि कर ग्रहण किया [illegible] आप सब से उत्तम शोभा वाले हैं। ३३. ८२

(३४) जो राज पुरुष पृथिवी के समान और अग्नि के तुल्य तेजस्वी, अन्न के समान आयुष्यवर्धक [illegible] धर्म से प्रजा की रक्षा करते हैं वे अतुल राज लक्ष्मी को पाते हैं। ३५. १८

(३५) जो राजपूत लोग महा धन की प्राप्ति के निमित्त बड़े युद्ध में या छोटे युद्ध में शत्रुओं को जीत वा बांध के निवारण करने, और धर्म से प्रजा को पालन करने के समर्थ होते हैं वे इस संसार में आनन्द को भोग कर परलोक में भी बड़े भारी आनन्द को भोगते हैं। १०. ४०. ८

(३६) जो अन्याय करने वाले मनुष्य धार्मिक मनुष्यों को पीड़ा देकर दुर्ग में रहते और फिर आकर दुःखी करते

हों उनका विनाश और श्रेष्ठों का पालन करने के लिये विद्वान् धार्मिक राजा लोगों को चाहिए कि उनके दुर्गों और नगरों का विनाश कर और शत्रुयों को छिन्न भिन्न मार या वशीभूत कर धर्म से राज्य का पालन करें। १. ४१. ३

(३७) न्यायाधीश मनुष्य जैसे प्रेम प्रीति के साथ सेवा करने से माता पितादिकों, पढ़ाने वालों, तथा ज्ञान और अवस्था से वृद्धों को तृप्त करें वैसे ही सब प्रजाओं के सुख के लिये दुष्ट मनुष्यों को दण्ड दे के धार्मिकों को सदा सुखी रक्खें। १. ४२. ५

(३८) जैसे जल नीचे स्थान को जाते हैं वैसे सभाध्यक्ष नम्र होकर विनय को प्राप्त होवें। १. ५२. ५

(३९) जैसे प्राण वायु से मनुष्यों को सुख होते हैं वैसे ही सभाध्यक्ष सब को सुखी करे। १. ६२. १३

४०) जैसे अन्न क्षुधा को और जल तृषा को निवारण करके सब प्राणियों को सुखी करते हैं वैसे सभापति आदि सब को सुखी करें। १. ६३. ८

(४१ सभापति राजा को चाहिए कि अच्छे परीक्षित मंत्रियों को स्वीकार कर उनके साथ सभा में बैठ विवाद करने वालों के वचन सुन के उन पर विचार कर यथार्थ न्याय करे। ३२. १५

(४२) प्रजाजनों को राजपुरुषों से ऐसा संबोधन करना चाहिए—तुम लोग हमारी सन्तान, धन, घर, और पदार्थों की रक्षा से नवीन २ ऐश्वर्य को प्राप्त करा के हम को पीड़ा देने हारे दुष्टों से दूर रक्खो। ३३. ६६

(४३) प्रजाजनों को चाहिए कि सदा ही राजा को उपदेश देवें कि हे राजन्! आपकी ओर से हम लोगों की रक्षा में धार्मिक, आलस्य रहित, पुरुषार्थी, और बलवान् जन नियत हों। हे राजन्! जो लोग अपने के सदृश अन्य जनों और आपके पदार्थ को जानते हैं, और अपने आत्मा के सदृश अन्यों की रक्षा करते हैं वे ही यथार्थ वक्ता आपके सेवक हों जिस से कि शत्रुओं का बल नष्ट होवे। ४. ४ १२, १३

[४४] प्रजा पुरुषों के स्वीकार किये विना राजा राज्य करने के योग्य नहीं होता। तथा राजा आदि सभा जिस को आदर से न चाहें वह मंत्री होने के; वा कोई पुरुष अपनी कीर्ति की उत्तरोत्तर दृढ़ता के विना सेनापति होने, यथायोग्य न्याय से दण्ड करने अर्थात् न्यायाधीश होने, और राज्य के मण्डल की ईश्वरता के [माण्डलिक राजा होने के] योग्य नहीं हो सकता। ६. २

[४५] जहां प्रजा के लोग धर्मात्मा राजा को प्राप्त होके अपनी २ इच्छा पूरी करते हैं वहां राजा की वृद्धि क्यों न हो। १२. ११६

[४६] राजा आदि राज पुरुषों को समस्त अपनी सामग्री न्याय से राज्य की पालना करने के लिये ही बनानी चाहिए। १. ११६. १८

तीसरा वर्ग

(१) जैसे इस जगत् में सर्वोपकार के लिये ईश्वर ने सूर्य बनाया वैसे ही सब के सुख के लिये राजा बनाया है। ६. ७१. ५.

राजा क्यों बनाया गया

(२) यदि राजपुरुष और प्रजाजन एक सम्मति करके उत्तम गुण, कर्म और स्वभाव से युक्त राजा का स्वीकार करें तो पूर्ण सुख प्राप्त हो। ४. १६. १६.

स्वराज्य से ही पूर्ण सुख है

(३) जिस राजा की पक्षपात रहित प्रवृत्ति और विस्तीर्ण नीति अविच्छिन्न वर्तमान है उसके राज्य में कोई भी अपराध करने की इच्छा नहीं करता। ५. ६. ६.

देश में अपराधी कब नहीं होते

(४) जहां सभा में मूलजड़ के अर्थात् निष्कलङ्क कुल परम्परा से उत्पन्न हुए, शास्त्रवेत्ता धार्मिक सभासद् सत्यन्याय करें, और विद्या तथा अवस्था से वृद्ध सभापति भी हों वहां अन्याय का प्रवेश नहीं होता। १. १७१. ५.

अन्याय कब नहीं होता

(५) जब विद्वान् सभा आदि के अधीश, आप्त अर्थात् प्रामाणिक सत्य वचन कहने वाले सभासद्, और आत्मिक शारीरिक बल से परिपूर्ण सेवक हों, तब राज्य पालन और विजय अच्छे प्रकार होते हैं। इससे उलटेपन में उलटा ही ढंग होता है। १. ९७. ३.

(६) जिस देश में पूर्ण विद्या वाले राजकर्मचारी हों वहां सब की एक मति होकर अत्यन्त सुख बढ़े। ३३ ६८.

देश में सुख कब होता है

(७) वन के वृक्षों की रक्षा से बहुत वर्षा और रोगों की न्यूनता के बिना, बिजुली से दूर के समाचारों को पाये बिना, और विद्या तथा न्याय के प्रकाश के बिना अच्छा स्थिर राज्य हो नहीं हो सकता। १२. ३३.

अच्छा स्थिर राज्य कब होता है

(८) अच्छे राज्य से सब सुख प्रजा में होता है। और विना अच्छे राज्य के दुःख और दुर्भिक्ष आदि उपद्रव होते हैं। इससे वीर पुरुषों को चाहिए कि नीति से राज्य पालन करें। १. १०४. ४.

अच्छे राज्य के लक्षण

[९] जिस राजा के राज्य में विद्या और सुशिक्षा से युक्त गुण कर्म स्वभाव से नियत धार्मिक चारों वर्ण और आश्रम, तथा सेना, प्रजा और न्यायाधीश हैं वह सूर्य के तुल्य कीर्ति से सुशोभित होता है। १. १२२. १५.

[१०] जिन के राज्य में दुष्ट वचन कहने वाले, चोर, और व्यभिचारी नहीं हैं वे चक्रवर्ती राज्य करने के समर्थ होते हैं। १. १३२. ४.

[११] जब तक सब की रक्षा करने वाला धार्मिक राजा वा आप्त विद्वान् न हो तब तक विद्या और मोक्ष के साधनों को निर्विघ्नता से पाने के योग्य कोई भी मनुष्य नहीं होता। और न मोक्ष सुख से अधिक कोई सुख है। ८. ५२.

धार्मिक राजा विना मोक्ष के लिये कुछ यत्न नहीं हो सकता

✻ पंचम खण्ड ✻

राजा तथा प्रजा के धर्म

[१] जब तक मनुष्य बल और क्रियाओं से युक्त होकर शत्रुओं को नहीं जीतते तब तक राज्य सुख को नहीं प्राप्त हो सकते क्योंकि बिना युद्ध और बल के शत्रुजन कभी नहीं डरते। तथा विद्वान् लोग विद्या, न्याय, और विनय के बिना यथावत् प्रजा के पालन करने में समर्थ नहीं हो सकते। इस कारण सबको जितेन्द्रिय होकर उक्त पदार्थों का संपादन करके के सुखके लिये उत्तमोत्तम प्रयत्न करना चाहिए। १. २८.

[२] ईश्वर आज्ञा देता है कि सब मनुष्यों को विद्या, और शुभ गुणों के प्रकाश और दुष्ट शत्रुयों की निवृत्ति के लिये नित्य पुरुषार्थ करना चाहिए। १. २६.

[३] हे मनुष्यो ! तुम शत्रुओं से रहित होकर राज्य को निष्कण्टक करके सब अस्त्र शस्त्रों का संपादन करके दुष्टों का नाश और श्रेष्ठों की रक्षा करो कि जिस से दुष्ट शत्रु सुखी और सज्जन लोग दुःखी कदापि न होवें। ३. ६१.

[४] सब मनुष्यों को परमेश्वर की उपासना करके परस्पर मित्रपन को संपादन कर युद्ध में दुष्टों को जीत के राज्यलक्ष्मी को प्राप्त होकर सुखी रहना चाहिए। ४. ८.

[५] किसी को भी मृत्यु से भय करना योग्य नहीं। क्योंकि जिनका जन्म हुआ है उनकी मृत्यु अवश्य होती है, इस लिये मृत्यु से डरना मूर्खों का काम है। १. ४१. १.

[६] प्रजापुरुष राज्य कर्म में जिस राजा का आश्रय करें वह उनकी रक्षा करे। और वे प्रजाजन उस न्यायाधीश के प्रति अपने अभिप्रायों को शंका समाधान के साथ कहें। राजा के नौकर चाकर भी न्यायकर्म ही से प्रजाजनों की रक्षा करें। ७. १७.

[७] राजा और विद्वानों को योग्य है कि वह निरन्तर राज्य की उन्नति किया करें। क्योंकि राज्य की उन्नति के बिना विद्वान् लोग सुगमता से विद्या का प्रचार और उपदेश भी नहीं कर सकते। और न विद्वानों के संग और उपदेश के बिना कोई राज्य की रक्षा करने के योग्य होता है। तथा राजा, प्रजा, और उत्तम विद्वानों की परस्पर प्रीति के विना ऐश्वर्य की उन्नति के विना आनन्द भी निरन्तर नहीं हो सकता। ७.२०

[८] जैसे चन्द्रलोक सब जगत् के लिये हितकारी होता है, और जैसे राजा सभ्यजन, और प्रजाजनों के साथ उनके उपकार के लिये धर्म के अनुकूल व्यवहार का आचरण करता है वैसे ही सभ्य पुरुष और प्रजाजन राजा के साथ वर्तें। जो उत्तम व्यवहार गुण, और कर्म का अनुष्ठान करने वाला होता है वही राजा, और सभापुरुष न्यायकारी हो सकता है। तथा जो धर्मात्मा जन है वही प्रजा में अग्रगण्य समझा जाता है। इस प्रकार यह तीनों [राजा, सभ्यजन, प्रजाजन) परस्पर प्रीति के साथ पुरुषार्थ से विद्या आदि गुण, और पृथिव्यादि पदार्थों से अखिल सुख को प्राप्त हो सकते हैं। ७. २१.

(६) सभाध्यक्ष राजा को चाहिए कि वह यथोचित समय में श्रेष्ठ राज्य को पाकर आप्त व्यवहार से प्रजाजनों के

लिये सब सुख देता रहे। और प्रजाजन भी राजा की आज्ञा के अनुकूल व्यवहारों में वर्ता करें। ७. ३०

(१०) राजा, राज्य कर्म में विचार करने वाले, (राज पुरुष) और प्रजाजनां को योग्य है कि प्रशंसा करने योग्य विद्वानों से विद्या और उपदेश पाकर औरों का उपकार सदा किया करें। ८. ३५

(११ प्रजा के विरोध से कोई राजा भी अच्छी ऋद्धि को नहीं पहुंचता। और ईश्वर वा राजा के बिना प्रजाजन धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को सिद्ध करने वाले काम नहीं कर सकते। इस से प्रजाजन, और राजा ईश्वर का आश्रय लेकर एक दूसरे के उपकार में धर्म के साथ अपना बर्ताव रक्खें। ८. ४६

[१२] राजा, राजपुरुष, सभासद्, तथा अन्य सब सज्जनों को उचित है कि पुरुषार्थ, संयम, और मित्रभाव से धार्मिक, वेद के पारगन्ता विद्वानों के मार्ग पर चलें। क्योंकि उन के तुल्य आचरण किये विना कोई विद्या, धर्म, सार्वजनिक प्रीतिभाव, और ऐश्वर्य को नहीं पा सकता। ८. ५०

[१३] जब तक राजा आदि सभ्यजन, वा प्रजाजन सत्य, धैर्य, सत्य से जोड़े हुए पदार्थ, वा सत्य व्यवहार में अपना बर्ताव न रक्खें तब तक प्रजा और राजा के सुख को, नहीं पा सकते। जब तक राज पुरुष तथा प्रजा पुरुष

पिता और पुत्र के तुल्य परस्पर प्रीति और उपकार नहीं करते तब तक निरन्तर सुख भी प्राप्त नहीं हो सकता। ८. ५१

[१४] राजा को ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि जिस से वेद विद्या का प्रचार, और शत्रुओं का विजय सुगम हो। और उपदेशक तथा योद्धा लोग ऐसा प्रयत्न करें कि जिस से राज्य में वेदादि शास्त्र पढ़ने पढ़ाने की प्रवृत्ति, और अपना राजा विजय रूपी आभूषणों से सुशोभित होवे कि जिस से अधर्म का नाश और धर्म की वृद्धि अच्छे प्रकार स्थिर होवे। ६. ११

[१५] दुष्टों को दण्ड और श्रेष्ठों की रक्षा के लिये ही राजा होता है। राज्य की रक्षा के बिना किसी चेष्टावान् नर की कार्य में निर्विघ्न प्रवृत्ति कभी नहीं हो सकती। और न प्रजाजनों के अनुकूल हुए बिना राजपुरुषों को स्थिरता होती है। इस लिये बन के सिंहों के समान परस्पर सहायी हो के सब राजा और प्रजा के मनुष्य सदा आनन्द में रहें। १०. ३३

[१६] प्रजा के पुरुषों और राजा को योग्य है कि राज-नीति के कामों, सब स्थानों, और सब पदार्थों के नामों को जानें। जैसे कृषक लोग कूएं से जल निकाल खेत आदि को तृप्त करते हैं वैसे ही धनादि पदार्थों से प्रजा राजा को और राजा प्रजाओं को तृप्त करें। १२. १६

[१७] जब मनुष्य राजा और प्रजा के व्यवहार में पृथ

सम्मति होकर सदा प्रयत्न करें तभी सूर्य और पृथिवी के तुल्य स्थिर सुख वाले होवें । १७. २५

[१८] जैसे सभाध्यक्ष और सेनाध्यक्ष के सहित राज पुरुष बाहुबल वा उपाय के द्वारा शत्रु, डाकू, चोर आदि, और दरिद्रपन को निवारण कर, मनुष्यों की अच्छे प्रकार रक्षा कर, पूर्ण सुखों को सम्पादन कर, सब विघ्नों को दूर कर, सब मनुष्यों को पुरुषार्थ में संयुक्त कर, ब्रह्मचर्य सेवन पूर्वक विषयों की लिप्सा छोड़ते हुए, विद्या वा उत्तम शिक्षा से शरीर की वृद्धि और आत्मा की उन्नति करते हैं वैसे ही प्रजाजन भी किया करें । १. ४१. २

[१६] राज प्रजाजनों को चाहिए कि विद्वानों की सभा में जाकर नित्य उपदेश सुनें जिस से सब करने, और न करने योग्य विषयों का बोध हो । १. ५७. १०

प्रजा पुरुषों को राजा लोगों के प्रिय आचरण नित्य करने चाहियें । और राजा लोगों को प्रजाजनों के कहे वाक्य सुनने योग्य हैं । ऐसे सब राजा प्रजा मिलकर न्याय की उन्नति और अन्याय को दूर करें । १. ११५. ११

[२०] जो प्रजा का विरोधी राज पुरुष, वा राजा का विरोधी प्रजा पुरुष है ये दोनों निश्चय है कि सुखोन्नति को नहीं पाते । जो राजपुरुष पक्षपात से अपने प्रयोजन के लिये प्रजापुरुषों को पीड़ा दे के धन इकट्ठा करता, तथा जो प्रजा पुरुष चोरी वा कपट आदि से राजधन को नाश करता है वे दोनों जैसे एक पुरुष की दो पत्नी परस्पर एक दूसरे से

कलह करके क्रोध से नदी के वीच गिर के मर जाती हैं वैसे ही शीघ्र विनाश हो जाते हैं। इस से राजपुरुष प्रजा के साथ, और प्रजा पुरुष राजा के साथ विरोध छोड़ के परस्पर सहायकारी होकर सदा अपना बर्ताव रक्खें। १. १०४. ३

स्वराजा को छोड़ शत्रु का आश्रय न लेना चाहिए

[२१] किसी मनुष्य को नास्तिक या मूर्खपन से सभाध्यक्ष या सेनाध्यक्ष के आश्रय को छोड़ शत्रु की याचना न करनी चाहिए। किन्तु वेदों से राजनीति को जान के इन दोनों के साहाय्य से शत्रुओं को मार, विज्ञान वा सुवर्ण आदि धनों को प्राप्त कर, उत्तम मार्ग में सुपात्रों के लिये दान देकर विद्या का विस्तार करना चाहिए। १. ४२. १०

दुष्ट राजजनों का अपमान करो

[२२] जो राजपुरुष इस संसार में उत्तम कार्यों के कर्ता हों उन का सब लोग सत्कार करें। और जो दुष्ट कर्म करते हों उनका अपमान करें। ३. ३४. ४

राज्य वृद्धि के लिये वेद विद्या का ग्रहण

(२३) ईश्वर का यह उपदेश है कि हे मनुष्यो! तुम विद्वानों की उन्नति तथा मूर्खपन का नाश, वा सब शत्रुओं की निवृत्ति से राज्य बढ़ने के लिये वेद विद्या को ग्रहण करो। १. ८

परमेश्वर की उपासना बिना स्वराज्य नहीं

(२४) जो लोग परमेश्वर की उपासना नहीं करते उनका विजय सर्वत्र नहीं होता। जो अच्छी शिक्षा देकर शूरवीर पुरुषों का

संस्कार करके सेना नहीं रखते हैं उन का सब जगह सहज में पराजय हो जाता है। इससे मनुष्यों को चाहिए कि दो प्रबन्ध अर्थात् एक तो परमेश्वर की उपासना और दूसरा वीरों की रक्षा सदा करते रहें। ५. ३७

(२५) यदि राजपुरुष और प्रजापुरुष वेद और ईश्वर की आज्ञा को छोड़ के अपनी इच्छा के अनुकूल प्रवृत्त होवें तो इनकी उन्नति का विनाश क्या न हो। १०. १८

(२६) जिस राज्य में मनुष्य लोग अच्छी प्रकार ईश्वर को जानते हैं वही देश सुख युक्त होता है। इस से राजा और प्रजा परस्पर सुख के लिए सद्गुणों के उपदेशक पुरुष की सदा सेवा करें। भूमिका ३५० पृ.

(२७) महाराजाधिराज पर ब्रह्मन्! अखण्ड चक्रवर्ती राज्य के लिये शौर्य, धैर्य, नीति, विनय, पराक्रम, और बलादि उत्तम गुण युक्त हम लोगों को कृपा से यथावत् पुष्ट कर। अन्य देश वासी राजा हमारे देश में कभी न हों, तथा हम पराधीन कभी न हों। आ. वि. २. ३१

स्वराज्य मनुष्य मात्र को अवश्य प्राप्तव्य है

(२८) हे कृपासिंधो भगवन्! हम पर सहायता करो जिस से सुनीति युक्त होके हमारा स्वराज्य अत्यन्त बढ़े। आ. वि. १. १८

* षष्ठ खण्ड *

पहिला वर्ग

राज्य प्रबन्ध

(१) राजा और प्रजाजन परस्पर सम्मति से समस्त राजा सभाधीन होकर राज्य व्यवहारों की पालना करें।
राज्य करे ६ २६

(२) राज्य का प्रबन्ध सभाधीन ही होने के योग्य है। जिस से प्रजाजन, राजसेवक, और राजपुरुष प्रजा की सेवा करने हारे अपने २ कामां में प्रवृत्त होकर सब प्रकार से एक दूसरे को आनन्दित करते रहे। ६. ३१

(३) राज धर्म में सब काम सभा के आधीन होने से विचार सभाओं में प्रवृत्त राज वर्गीय जनों (राजपुरुषों) में से दो तीन वा बहुत सभासद् मिल कर अपने विचार से जिस अर्थ को सिद्ध करें उसी के अनुकूल राजपुरुष और प्रजाजन अपना बर्ताव रक्खें। ७. ३२

(४) मनुष्यों को चाहिए कि सभा और सभापतियों से ही राज्य की व्यवस्था करें। कभी एक राजा की आधीनता से स्थिर न हों, क्यांकि एक पुरुष से बहुतों के हिताहित का विचार कभी नहीं हो सकता। १६. २४

(५) राजा तथा प्रजा के पुरुषों को चाहिए कि सभाध्यक्ष राजा से ऐसा कहें—हे सभापते ! आपकी बिना सहाय

के (एकाकी) कुछ राजकार्य न करना चाहिए। किन्तु आप को उचित है कि सज्जनों की रक्षा और दुष्टों के ताड़न में अस्मदादि के सहाययुक्त सदैव रहें। शुभाचरण से युक्त अस्मदादि शिष्टों की सम्मति पूर्वक कोमल वचनों से सब प्रजाओं का शासन करें। ३३. २७

(६) मनुष्यों को ईश्वरेष्ट, (वेदोक्त जिस को परमेश्वर इष्ट मानता है) सभाध्यक्ष से प्रशाशित, तथा एक मनुष्य—राजा के प्रशासन से अलग, राज्य को सम्पादन करना चाहिए। जिस से कभी दुःख, अन्याय, आलस्य, अज्ञान, और शत्रुओं के परस्पर विरोध से प्रजा पीड़ित न होवे। १. ५५. ३

(७) मनुष्यों को चाहिये कि जो सर्वोत्कृष्ट गुण कर्म स्वभाव वाला, तथा सब का उपकार करने वाला सज्जन मनुष्य है उसी को सभाध्यक्ष का अधिकार देके राजा मानें, अर्थात् किसी एक मनुष्य को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार कभी न दें, किन्तु शिष्ट पुरुषों की जो सभा है उस के आधीन राज्य के सब काम रक्खें। १. ७७. ३

(८) जो २ विशेष बड़े २ काम हों जैसा कि राज्य वे सब सभा से निश्चय करके किये जावें। संस्कार० २२१ पृ०

(९) राज्य के लिए एक को राजा कभी नहीं मानना चाहिये। क्योंकि जहां एक को राजा मानते हैं वहां सब प्रजा दुःखी, और उस के (प्रजा के) उत्तम पदार्थों का अभाव हो जाता है। इसी से किसी की उन्नति नहीं होती। इसी लिये सभा द्वारा राज्य का प्रबन्ध आर्यों में श्री मन्महाराज युधिष्ठिर

पर्यन्त बराबर चला आया है। आर्यों की यह एक बात बड़ी उत्तम थी कि जिस सभा वा न्यायाधीश के सामने अन्याय हो वह प्रजा का दोष नहीं मानते थे किन्तु वह दोष सभाध्यक्ष, सभासद्, न्यायाधीश का ही गिना जाता था। इस लिए वे लोग सत्य न्याय करनें में अत्यन्त पुरुषार्थ करते थे कि जिस से आर्यावर्त के न्यायघर में कभी अन्याय नहीं होता था। और जहां होता था वहां उन्हीं न्यायाधीशों को दोष देते थे। यही सब आर्यों का सिद्धान्त है। अर्थात् इन्हीं वेदादि शास्त्रों की रीति से आर्यों ने भूगोल में करोड़ों वर्ष राज्य किया है इस में कुछ सन्देह नहीं। भूमिका २४७. पृ०

(१०) राज्य का धारण करना सभा ही का काम है और उसी सभा का नाम राजा है। यही अपनी ओर से प्रजा पर कर लगाती है, क्योंकि राजा से राज्य ही की, और प्रजा ही से प्रजा की वृद्धि होती है। (तस्मात् प्रजा सत्तयैव राज्य राज्य प्रबन्धः कार्यः=अतः प्रजा सत्ताक ही राज्य प्रबन्ध करना चाहिए)। भूमिका ३:८ पृ०

(११) जहां एक मनुष्य राजा होता है वहां प्रजा ठगी जाती है। जहां एक मनुष्य राजा होता है वहां वह अपने लोभ से प्रजा के पदार्थों की हानि ही करता चला जाता है। इस कारण से एक को राजा कभी नहीं मानना चाहिए। किन्तु धार्मिक विद्वानों की सभा के अधीन ही राज्य प्रबन्ध होना चाहिए। भूमिका ३५२ पृ०

(१२) जैसें मृग, पशु पराये खेत में यवों को खाकर आनन्दित होते हैं वैसें ही स्वतन्त्र एक पुरुष राजा होने से

प्रजा के उत्तम पदार्थों को ग्रहण कर लेता है। अथवा जैसे मांसाहारी मनुष्य पुष्ट पशु को मार के उसका मांस खा जाता है वैसे ही एक मनुष्य राजा होके प्रजा का नाश करने हारा होता है क्योंकि यह सदा अपनी ही उन्नति चाहता रहता है। और शूद्र तथा वैश्य का अभिषेक करने से व्यभिचार और प्रजा का हरण अधिक होता है, इस लिये किसी मूर्ख वा लोभी को भी सभाध्यक्षादि उत्तम अधिकार न देना चाहिये। भूमिका ३५६ पृ०

दूसरा वर्ग

(१) यदि सभा में मत भेद हो तो बहु पक्षानुसार मानना। और समपक्षमें उत्तमोंकी बात स्वीकार करनी। और दोनों पक्ष वाले बराबर (उत्तम) हों तो वहां सन्यासियों को सम्मति लेनी। जिधर पक्षपात रहित, सर्व हितैषी, सन्यासियों की सम्मति होवे वही उत्तम समझनी चाहिए। संस्कार० २२३ पृ.

सभा में सम सम्मतियें होने पर निश्चय विधि

(२) इस राज्य व्यवहार में गृहस्थ को छोड़ किसी ब्रह्मचारी, वनस्थ, वा यति की प्रवृत्ति होनी योग्य नहीं। १. १००. ११.

राज्यव्यवहार केवल गृहस्थी का है

(३) तीन प्रकार की सभा ही को राजा मानना चाहिए एक मनुष्य को नहीं। भूमिका २२६ पृ.

तीन सभायें

सभापति राजा को चाहिए कि अपने पुत्रों के तुल्य प्रजा तथा सेना के पुरुषों को प्रसन्न रक्खे, और परमेश्वर के तुल्य पक्षपात छोड़ कर न्याय करें। धार्मिक सभ्यजनों की तीन सभायें होनी चाहिएं। (क) उन में से एक राजसभा जिस के आधीन राज्य के सब कार्य चलें और सब उपद्रव निवृत्त रहें। (ख) दूसरी विद्या सभा जिस से विद्या का प्रचार अनेक विधि किया जावे, और अविद्या का नाश होता रहे। (ग) और तीसरी धर्म सभा जिस से धर्म की उन्नति और अधर्म की हानि निरन्तर की जावे।

सब लोगों को उचित है कि अपने आत्मा और परमात्मा को सर्वत्र देख कर अन्याय मार्ग से अलग हों। तथा धर्म का सेवन, और सभासदों के साथ समयानुकूल अनेक प्रकार से विचार करके सत्य और असत्य के निर्णय करने में प्रयत्न किया करें। ७. ४५.

(४) जो विद्या सभा, धर्म सभा, वा राज सभा से आज्ञायें प्रकाशित हों सब मनुष्य उनका श्रवण तथा अनुष्ठान करें। जो सभासद् हों वे भी पक्षपात को छोड़ कर प्रतिदिन सब के हित के लिये सब मिलकर जैसे अविद्या, अधर्म, अन्याय का नाश होवे वैसा यत्न करें। १. ४३. १४.

(५) धर्म सभा के अधिकृत लोगों की आधीनता में वर्तमान उपदेशक सबको सत्यासत्य का उपदेश देकर धर्मात्मा करें, और उनके प्रश्नों को सुनके समाधान करें। ३. ५४. १६.

(६) जो राजसभा का उपदेशक है वह इन राजादिकों को दुर्व्यसनों से पृथक कर और सुशीलता को प्राप्त कराके बड़े ऐश्वर्य की वृद्धि के लिये प्रवृत्त करे। २७. ८.

राजसभा के सभासदों के लिये उपदेशक

(७) हे राजा और राजोपदेशको ! तुम कभी मदकारक वस्तु का सेवन न करो। ४. ५०. १०.

यह उपदेशक तथा राजा कभी मद्य न पीवें

(८) राजा को चाहिए कि दो प्रकार के वैद्य (Health officers) रक्खे। एक तो सुगन्धादि पदार्थों के होम से वायु, वर्षाजल, और औषधियों को शुद्ध करें दूसरे श्रेष्ठ विद्वान् वैद्य होकर निदान आदि के द्वारा सब प्राणियों को रोग रहित रक्खें। इस कर्म के विना संसार में सार्वजनिक सुख नहीं हो सकता। ११. ३८.

दो प्रकार के वैद्य राष्ट्र में रक्खे जावें

(९) राजा तथा प्रजा के मनुष्यों को चाहिए कि बन आदि के रक्षक मनुष्यों को (Forest department के मनुष्यों को) अन्नादि पदार्थ देके वृक्षों और औषधिआदि पदार्थों की उन्नति करें। १६.१९.

वनों की रक्षा की जावे

(१०) प्रजापुरुषों को राजपुरुषों से ऐसी प्रार्थना करनी चाहिए कि हे पूज्य राजपुरुष विद्वानो ! तुम सदैव हमारे अविरोधी, कपटादि रहित, और भय के निवारक होवो। चोर, व्याघ्रादि, और मार्ग शोधने से गढ़े आदि से हमारी रक्षा करो। ३३. ५१.

सड़कों की मुरम्मत आदि

(११) राजपुरुषों को चाहिए कि मनुष्य आदि प्राणियों के सुख के लिये मार्ग में अनेक घड़ों जल से नित्य सिंचाव कराया करें, जिससे घोड़े बैल आदि के पैरों की खूंदन से धूल न उड़े। १. ११७. ६.

(१२) राजा आदि न्यायाधीश खेती आदि कामों के करने वाले पुरुषों को सब उपकरण, पालना करने वाले पुरुषों, तथा सत्यन्याय को देकर पुरुषार्थ में प्रवृत्त करें। और कार्यों की सिद्धि को प्राप्त हुए इनसे (असिद्धि में नहीं) धर्मानुकूल अपने भाग को यथायोग्य ग्रहण करें। १. ११७. ७.

कृषि में सहायता

(१३) राजपुरुषों को योग्य है कि जो द्वीपद्वीपान्तर और देश देशान्तर में व्यापार करने के लिये जावें आवें उनकी रक्षा प्रयत्न से किया करें। १. ११२. ११.

व्यापारियों की विशेष रक्षा

(१४) जो सभा और सेना के अधिपति वनियों की भली भान्ति रक्षा कर रथ आदि यानों में बैठा कर द्वीपद्वीपान्तर में पहुंचावें तो वे बहुत धनयुक्त होकर निरन्तर सुखी होते हैं। १. ११६. ६.

(१५) जो राज पुरुष राजनीति के साथ वैश्यों की उन्नति करें वेही लक्ष्मी को प्राप्त होवें। १०. १२.

(१६) राज पुरुषों को चाहिए कि जैसे परमेश्वर ने सृष्टि में रचना विशेष दिखाये हैं वैसे शिल्प विद्या से सृष्टि के दृष्टान्त से विशेष रचना किया करें। ३०. ७.

शिल्पविद्या की उन्नति

(१७) राज पुरुषों को चाहिए कि अनेक सभाओं को बनाके सब व्यवस्था और शिल्प विद्या की उन्नति किया करें। ३०. ६.

(१८) प्रजा, सेना, और पाठशालाओं की सभाओं में स्थित पुरुषों को योग्य है कि अच्छे प्रकार परीक्षा करके सूर्य के समान तेजस्वी पुरुष को प्रजा, सेना और पाठशालाओं का अध्यक्ष करके सब प्रकार से उसका सत्कार करें। इसी प्रकार सभ्यजनों की भी प्रतिष्ठा करनी चाहिए। १. ८४. १.

सेना सभा आदि

(१९) हे राजन्! जितना आपको राज्य से भाग लेना चाहिए उतना ही ग्रहण कर भोग करिये न अधिक न न्यून। ऐसा करने से आपकी हानि कभी नहीं होगी। ३. ४०. ४.

राजा का वेतन नियत हो

(२०) सब विद्वानों को उचित है कि जैसे न्यायाधीश की न्याययुक्त सभा से जो आज्ञा हो उसका कभी उल्लङ्घन न करे वैसे वे राजसभा के सभासद् भी वेदज्ञ विद्वानों की आज्ञा को उल्लङ्घन न करें। ७. ३५.

राजसभा वेदज्ञों की आज्ञा उल्लंघन नें करे

(२१) राजा को चाहिए कि अधिकारियों के नियत करने में प्रजा की सम्मति भी ग्रहण करे। ऐसा होने पर कभी भी उपद्रव नहीं होता। ६.१६.२८.

अधिकारियों के नियत करने में प्रजा की सम्मति राजा ले

तीसरा वर्ग ।

(१) हे मनुष्यो ! जैसे सूर्य वा बिजुली वर्षा करने से सुख देने वाली, और तीव्र ताप से वा ओले डालने से भयङ्कर है वैसे जो राजा विद्याध्ययन के लिये सन्तानों को नहीं देते उनके लिये दण्ड देने वाला, और ब्रह्मचर्य से सब की विद्या बढ़ाने वाला हो उसी को सब स्वीकार करें । ७. १६. १

शिक्षा प्रजा मात्र को अवश्य दी जावे

(२) इस में राजनियम और जातिनियम होना चाहिए कि पांचवें या आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़कों और लड़कियों को घर में न रख सके, पाठशाला में अवश्य भेज देवें । जो न भेजे वह दण्डनीय हो । सत्यार्थ० ३३ पृ०

(३) राज पुरुषों को चाहिए कि सब प्राणियों से मित्रता करके सुशिक्षा द्वारा इन प्रजाजनों को उत्तम गुणयुक्त विद्वान् बनावें जिस से ये ऐश्वर्य के भागी होकर राजभक्त हों । ६. ३३

(४) राजाओं को उचित है कि सब प्रजा के सन्तानों को ब्रह्मचर्य, विद्या दान, तथा स्वयंवर विवाह कराके और डाकूओं से रक्षा करके उन्नति करें । ३३. ८४

(५) राजादि पुरुषों को चाहिए कि धनाढ्यों से (उनके धन द्वारा) दरिद्रों को भी अच्छी शिक्षा देके धनाढ्य करें । तथा विद्वान् और अविद्वानों का मेल कराके परस्पर

धनाढ्यों के धन से दरिद्र बच्चे पढ़ें

उन्नति करावें, और परस्पर (मूर्ख, पण्डित या शूद्र, द्विज) दुःख का निवारण कर सुखों से संयुक्त करें। ७. २७. २०

कन्याओं को भी अवश्य शिक्षा दी जावे

(६) हे राजा आदि राज पुरुषो! तुम लोग इस जगत् में जैसे बालकों के पढ़ाने में सज्जन नियुक्त करते हो वैसे कन्याओं को पढ़ाने के लिये शुद्ध विद्या की परीक्षा करने वाली स्त्रियों को नियुक्त करो। जिससे यह कन्यायें विद्या और शिक्षा को प्राप्त होकर युवती होने पर अपने सदृश प्रियवर पुरुषों के साथ स्वयंवर विवाह करके वीर पुरुषों को उत्पन्न करें। १०. ६

(७) राजा को चाहिए कि अपने राज्यमें प्रयत्न के साथ सब स्त्रियों को विदुषी बनावे। और उन से उत्पन्न बालकों को विद्यायुक्त धाईयों के आधीन करे कि जिस से किसी के बालक विद्या और अच्छी शिक्षा के बिना न रहें, और स्त्री भी निर्बल न हो। १०. ७

(८) जैसे राजा सब कन्याओं को पढ़ाने के लिये पूर्ण विद्या वाली स्त्रियों को नियुक्त करके सब बालिकाओं को पूर्ण विद्या और सुशिक्षा युक्त करे वैसे ही बालकों को भी किया करे। जब ये पूर्ण युवावस्था वाले हों तभी स्वयंवर विवाह करावे। ऐसे राज्य की वृद्धि को सदा किया करे। १६. ४४

विद्या द्वारा शूद्र को भी द्विज बनावे

(९) हे राजन्! आप सत्य विद्या के दान और उपदेश से शूद्र के कुल में उत्पन्न हुओं को भी द्विज करिये। ६. २२. १०

(१०) जो कन्या और पुत्रों में, स्त्री और पुरुषों में विद्या बढ़ाने वाला कर्म है वही राज्य का बढ़ाने, शत्रुओं का विनाश करने, और धर्म आदि की प्रवृत्ति करने वाला होता है। इसी कर्म से सब कालों और सब दिशाओं में रक्षा होती है। १०. ८

एक मात्र विद्या ही राज्य रक्षक है

(११) विद्या और शाला (शिक्षाशाला) का अध्यक्ष उत्तम शिक्षा से सब विद्वानों को शस्त्रास्त्र में कुशल संपन्न करके इन से प्रजा की निरन्तर रक्षा करे। १. ५३. १०

शस्त्रास्त्र विद्या भी सब को दी जावे

(१२) जितने स्त्री पुरुष हों वे सब शस्त्र का अभ्यास करें। १. १७१. ४

चौथा वर्ग

(१) जैसे न्यायाधीश राजा न्यायघर में बैठ के पुरुषों को दण्ड देवे वैसे न्यायाधीशा रानी स्त्रियों का न्याय करे। उस न्यायघर में राग द्वेष और प्रीति अप्रीति को छोड़ के केवल न्याय ही किया करे अन्य कुछ न करे। २. २७. ७

स्त्रियों पर राज्य रानी करे

(२) जिस देश वा नगर में विदुषी स्त्री स्त्रियों का न्याय करने वाली, और पुरुषों का न्याय करने वाला विद्वान् पुरुष

हो वहां दिन रात निर्भय होते हैं, और विशेष कर चोर आदि के भयसे रहित सुख पूर्वक रात्रि व्यतीत होती है। २. २७. १४

(३ जैसे राजा लोग पुरुषों का न्याय करें वैसे ही स्त्रियों के न्याय को रानियें करें। जैसे राजाओं के समीप पुरुष मंत्री होते हैं वैसे रानियों के समीप स्त्रियां मंत्री होवें। ५. ४६. ७, ८

(४) राजाओं की स्त्रियों को चाहिए कि वह सब स्त्रियों के लिये न्याय और अच्छी शिक्षा देवें। स्त्रियों का न्यायादि पुरुष न करें क्योंकि पुरुषों के सामने स्त्री लज्जित और भय-युक्त होकर यथावत् बोल या पढ़ नहीं सकती। १०. २६

(५) सब मनुष्यों को चाहिए कि जैसा पुरुष सब दिशाओं में कीर्तियुक्त, वेदों को जानने हारा, धनुर्वेद और अर्थवेद की विद्या में प्रवीण, सत्य करने हारा, और सब को सुख देने वाला धर्मात्मा पुरुष होवे वेसे ही उसकी स्त्री भी होवे। उनको राज धर्म में स्थापन करके अत्यन्त सुख और परम शोभा को प्राप्त हों। १०. २८

(६) जो पुरुष वा स्त्री साङ्गोपाङ्ग सार्थक वेदों को पढ़ के विद्वान् वा विदुषी होवें वे राजपुत्र और राज कन्याओं को विद्वान् और विदुषी करके उन से (राजा, राणी) धर्मानुकूल राज्य तथा प्रजा का व्यवहार करावें। ११. ३३

(७) जैसी राजनीति विद्या को राजा पढ़ा हो वैसी ही उसकी रानी भी पढ़ी हुई होनी चाहिए। सदैव दोनों पतिव्रता, स्त्रीव्रत होके न्याय से राज्य पालन करें। व्यभिचार और काम

की व्यथा से रहित होकर धर्मानुकूल पुत्रों को उत्पन्न करके स्त्रियों का स्त्री राणी, और पुरुषों का पुरुष राजा न्याय करे। १३. १६

(८) राजपुरुष आदिकों को चाहिए कि आप जिस २ कार्य में प्रवृत्त हों उस उस कार्य में अपनी २ स्त्रियों को भी स्थापन करें। जो जो राजपुरुष पुरुषों का न्याय करे उस उस की स्त्री स्त्रियों का न्याय किया करे। १३. १७

(९) स्त्रियों को चाहिए कि युद्ध में भी अपने पतियों के साथ स्थित रहें। १४. ३

स्त्रियें भी युद्ध करें उनकी सेना भी हो

(१०) हे मनुष्यो! जो रानी धनुर्वेद जानती हुई शस्त्रास्त्र फैंकने वाली है उसका वीरों को निरन्तर सत्कार करना चाहिए। ६. ७५. १५

(११) राजा को योग्य है कि अपनी रानी के साथ अच्छे सुशिक्षित घोड़ों से युक्त रथ में बैठकर युद्ध में विजय, और व्यवहार में आनन्द को प्राप्त हों। जहां २ युद्ध में या भ्रमण के लिये जावें वहां २ उत्तम कारीगरों से बनाये सुन्दर रथ में स्त्री के सहित स्थित हो के ही जावे। १. ८२. ५

(१२) सभापति आदि को योग्य है कि जैसे अति प्रशंसित, हृष्ट पुष्ट अङ्गउपाङ्गादि युक्त, शूरवीर पुरुषों की सेना का स्वीकार करें, वैसे शूरवीर स्त्रियों कीभी सेना स्वीकार करें। और जिस स्त्री सेना में अव्यभिचारिणी स्त्रियें रहें उस सेना से शत्रुओं को वश में स्थापन करे। १७. ४४

(१३) सभापति आदि को चाहिये कि जैसे युद्ध विद्या से पुरुषों को शिक्षित करें वैसे स्त्रियों को भी शिक्षित करें। जैसे वीर पुरुष युद्ध करें वैसे स्त्रियें भी करें। १७. ७५

सेनापति के अभाव में उसकी स्त्री युद्ध में कार्य करे

(१४) संग्राम में राजा के अभाव में रानी सेनापति हो। और जैसे राजा युद्ध के लिये वीरों को प्रेरणा दे वैसे ही यह भी आचरण करे। ६. ७५. १३

पांचवां वर्ग।

(१) मनुष्यों को दो प्रयोजनों में प्रवृत्त होना चाहिए।

मनुष्य मात्र को स्वराज्य के साथ २ चक्रवर्ती राज्य भी प्राप्त करना चाहिए

(क अर्थात् एक तो अत्यन्त पुरुषार्थ और शरीर की आरोग्यता से चक्रवर्ती राज्य लक्ष्मी की प्राप्ति करना, (ख) और दूसरे सब विद्याओं को अच्छी प्रकार पढ़के उन का प्रचार करना चाहिए। किसी मनुष्य को पुरुषार्थ छोड़के आलस्य में कभी नहीं रहना चाहिए। १. ६.

(२) जब मनुष्य लोग परमेश्वर की आराधना कर अच्छे प्रकार सब सामग्री को संग्रह करके युद्ध में शत्रुओं को जीत कर चक्रवर्ती राज्य को प्राप्त कर प्रजा का अच्छे प्रकार पालन करके बड़े आनन्द को सेवन करते हैं तब उत्तम राज्य होता है। ३. ४६.

(३) जो राज्य के अधिकारी पुरुष और उनकी स्त्रियां हों उनको चाहिए कि अपनी उन्नति के लिये दूसरों की उन्नति

को सहके सब मनुष्यों को राज्य के योग्य करें, और आप भी चक्रवर्ति राज्य का भोग किया करें। ऐसा न हो कि ईर्ष्या से दूसरों की हानि करके अपने राज्य का भङ्ग करें। १०. ३.

चक्रवर्ती राजा के गुण तथा चुनाव

(४) हे राजा और प्रजा के मनुष्यो! जो विद्वान् माता पिता से भली प्रकार सुशिक्षित, कुलीन उत्तमगुण कर्म स्वभाव वाला जितेन्द्रियादि गुणयुक्त, ४८ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य से पूर्ण विद्या द्वारा सुशील, शरीर और आत्मा के पूर्ण बल से युक्त धर्म से प्रजा का पालक, प्रेमी, विद्वान् हो उसको तुम सभापति राजा मान कर चक्रवर्ती राज्य का सेवन करो। ६.४०

(५) हे मनुष्यो! मूल राज्य (यहां स्वामी जी ने चक्रवर्ती राज्य को सब राज्यों का मूल जड़ के नाम से लिखा है) के बीच सनातन राजनीति को जानकर जो राज्य की रक्षा में समर्थ हो उसी को चक्रवर्ती राजा करो। और जो कर देने वालों से कर दिलावे वह मंत्री होने के योग्य होवे। जो शत्रुओं के निग्रह में समर्थ हो उसे सेनापति करो। और जो विद्वान्, धार्मिक हो उसे न्यायाधीश वा कोषाध्यक्ष करो। ६. २४.

स्त्रियों पर राज्य चक्रवर्ती रानी करे

(६) जैसे चक्रवर्ती राजा चक्रवर्ती राज्य की रक्षा के लिये न्याय की गद्दी पर बैठ के पुरुषों का ठीक २ न्याय करे वैसे नित्यप्रति राणी स्त्रियों का न्याय करे। इससे क्या आया कि जैसे नीति विद्या, और धर्म से युक्त पति हो वैसा ही स्त्री को भी होना चाहिए। १०. २७

(७) मनुष्यों को चाहिए कि अत्युत्तम सभाध्यक्ष मनुष्यों के सहित सभा बनाके राज्यव्यवहार की रक्षा से चक्रवर्ती राज्य का शासन करें। इसके बिना कभी स्थित राज्य नहीं होता।

चक्रवर्ती राज्य भी सभाधीन हो

इस लिये पूर्वोक्त कर्म का अनुष्ठान करके एक को राजा नहीं मानना चाहिए। १. ७७ ४.

(८) प्रजा के बीच अपनी २ सभाओं सहित दो राजा होने चाहिए। एक चक्रवर्ती अर्थात् एकचक्र (भूगोल पर) राज्य करने वाला, और दूसरा माण्डलिक कि जो मण्डल २ का ईश्वर हो।

चक्रवर्ती राजा के कर्तव्य

यह दोनों प्रकार के राजाजन उत्तमोत्तम न्याय, नम्रता, सुशीलता, और वीरता आदि गुणों से प्रजा की रक्षा अच्छे प्रकार करें। फिर उन प्रजाजनों से यथायोग्य राज्यकर लेवें, और सब व्यवहारों में विद्या की वृद्धि तथा सत्यवचन का आचरण करें। इस प्रकार धर्म अर्थ और कामनाओं से प्रजा-जनों को संतोष देकर आप संतोष पावें। आपत्काल में राजा प्रजा की तथा प्रजा राजा की रक्षा कर परस्पर आनन्दित हों। ८. ३७.

(९) चक्रवर्ती राजा को माण्डलिक वा महामाण्डलिक राजाओं, भृत्यों, गृहस्थों वा विरक्तों को प्रसन्न कर, और शरणागत आये हुए मनुष्य की रक्षा करके धर्मयुक्त सार्वभौम राज्य का यथावत् पालन करना चहिए। १. ५३. ६.

छँवां वर्ग

सेना विभाग

सेनापति के गुण तथा प्रजा द्वारा चुनाव

(१) सब विद्याओं के जानने वाले विद्वान् को योग्य है कि राज्य व्यवहार में सेना के वीर पुरुषों की रक्षा करने के लिये अच्छी शिक्षा युक्त, शस्त्रास्त्र विद्या में परमप्रवीण, यज्ञ का अनुष्ठान करने वाले, वीर पुरुष को सेनापति के काम में युक्त करें। और सभापति तथा सेनापति को चाहिये कि परस्पर सम्मति करके राज्य और यज्ञ को बढ़ावें। ७ २२

(२ राजा और प्रजा पुरुषों को चाहिए कि न्याय से प्रजा की रक्षा करने हारे, अग्नि के समान शत्रुओं को मारने हारे, और सब काल में सुख देने हारे पुरुष को सेनापति करें। ११. २६

(३ पृथिवी का राज्य करने हारे मनुष्यों को चाहिये कि आग्नेयादि अस्त्रों, और तलवार आदि शस्त्रों का सञ्चय कर और पूर्ण बुद्धि, विद्या, शरीरबल तथा आत्मबल से युक्त पुरुष को सेनापति करके निर्भयता से बर्तें। ११. ७६

(४) मनुष्यों को चाहिए कि जो धनुर्वेद और ऋग्वेदादि शास्त्रों का जानने वाला, निर्भय, सब दिशाओं में कुशल, अति बलवान्, धार्मिक, अपने स्वामी के राज्य में प्रीति करने वाला, जितेन्द्रिय, शत्रुओं को जीतने हारा, तथा अपनी सेना

[१४] जो संग्राम में समुदाय से [सब का सांझा] पाये हुए धन का यथावत् विभाग कर सोलहवां भाग भृत्यों [योद्धा तथा अन्य भृत्य] को देते हैं। तथा वहां संग्राम में जो योद्धा जीतें उनके लिये उस से भी [अपनी भिन्न २ जीत से] सोलहवां भाग देते हैं वे ही विजयी होकर आपस में प्रसन्न होते हैं। ६. ६८. ५

युद्ध में जीते हुए धन का विभाग

[१५] युद्ध में भृत्यजन [योद्धा तथा अन्य भृत्य] शत्रुओं के जिन पदार्थों को पावें उन सभों को सभापति राजा स्वीकार न करे। किन्तु उन में से यथायोग्य सत्कार के लिये योद्धाओं को सोलहवां भाग देवें। वे भृत्यजन [योद्धाओं के अतिरिक्त भृत्य] जितना कुछ भाग पावें उसका सोलहवां भाग राजा के लिये देवें। जो सभापति अपने हित को किया चाहे तो लड़ने हारे भृत्यों का भाग आप न लेवे। १७. ५१

[१४, १५ में तीन नियम ज्ञात होते हैं [क] जो सब ने इकट्ठे मिल के जीता हो उस का सोलहवां भाग युद्ध के सब योद्धादि भृत्यों को बांटा जावे [ख] जो जो योद्धाओं ने पृथक् २ जीता हो उस का सोलहवां भाग केवल उन २ योद्धाओं को मिले [ग] जो योद्धाओं के अतिरिक्त भृत्यों ने जीता हो उसका $\frac{1}{16}$ भाग उन भृत्यों को दिया जावे]

[१६] योद्धा लोगों को चाहिये कि युद्ध के समय वृद्धों बालकों, युद्ध से हटने वालों, जवानों [उत्तम सन्तान उत्पन्न करने वाले नव विवाहित युवक] गर्भों, योद्धाओं के माता पितरों सब स्त्रियों,

युद्ध में अवध्य जन

युद्ध के देखने या प्रबन्ध करने वालों, और दूतों को न मारें, किन्तु शत्रुओं के सम्बन्धि [उपर्युक्त] मनुष्यों को सदा वश में रक्खें। १६. १५

सातवां वर्ग

दण्ड व्यवस्था

गवादि पशु घातकों को मृत्यु दण्ड तक दिया आवे

(१) राजपुरुषों को चाहिए कि जो गौ आदि बड़े उपकार के पशुओं को मारने वाले सिंह आदि या मनुष्य हों उन्हें, तथा जो चोर आदि मनुष्य हैं उनको अनेक प्रकार के बन्धनों से बांध, ताड़ना दे, या नष्ट कर वश में लावें। ११. ७८

(२) हे राजपुरुषो! तुम लोगों को चाहिए कि जिन बैल आदि पशुओं के प्रभाव से खेती आदि काम, और जिन गौ आदि से दूध घी आदि उत्तम पदार्थ होते हैं कि जिनके दूध आदि से सब प्रजा की रक्षा होती है उनको कभी मत मारो (उनके मारने से राजपुरुष प्रजा रक्षक नहीं प्रत्युत प्रजा घातक होंगे) और जो जन इन उपकारक पशुओं को मारे उनको राजादि न्यायाधीश अत्यन्त दण्ड देवें। और जो जंगल में रहने वाले नीलगाय आदि प्रजा की हानि करें वे मारने योग्य हैं। १३. ४६

(३) हे राजन्! जिन भेड़ आदि के रोम और त्वचा मनुष्यों के सुख के लिये होती हैं। और जो ऊंट भार उठाते

हुए मनुष्यों को सुख देते हैं उनको जो दुष्ट जन मारा चाहें उनको संसार के दुःखदायी समझो, और उनको अच्छे प्रकार दण्ड देना चाहिए। १३. ५०

(४) राज मनुष्यों को उचित है कि बकरे, और मोर आदि श्रेष्ठ पक्षियों को न मारें, और इनकी रक्षा करके उपकार के लिये संयुक्त करें। और जो अच्छे पशुओं तथा पक्षियों को मारने वाले हों उनको शीघ्र ताड़ना देवें। हां जो खेती को उजाड़ने हारे श्याही आदि पशु हैं उनको प्रजा की रक्षा के लिये मारें। १३. ५१

(५) जो मनुष्य उत्तम पशुओं के मारने की इच्छा करते हैं वे सिंह के समान [हिंसक समझ कर] मारने चाहिएं। और जो इन पशुओं की रक्षा करने का अच्छा यत्न करते हैं वे सबकी रक्षा करने के लिये अधिकृत करने योग्य हैं। २२. ५

(६) जो मनुष्य ज्योतिषी आदि सत्याचारियों का सत्कार करने और दुष्टाचारी गोहत्यारे आदि को ताड़ना देते हैं वे राज्य करने को समर्थ होते हैं। ३०, १८

(७) जो राज पुरुष भयानक गोहत्या करने वालों को मारते हैं और उत्तमों की रक्षा करते हैं वे निर्भय होते हैं। २. १४. ३

[८] राजाओं का यह उचित कर्म है कि जो मादक द्रव्य

मद्यादि पीने वालों को कठोर दण्ड दिया जावे

का सेवन करें उनको अत्यन्त दण्ड देके यथायोग्य सत्कार से अप्रमादियों [मद्यादि न पीने वालों] का सत्कार करें तो वे साम्राज्य करने के योग्य होवें। ६. २०. ६

निरपराधी पर दोष लगाने वाले को दण्ड

(९) हे न्यायाधीश! जो करने के बिना अपराध को स्थापित करते हैं (किसी निर्दोषी को अपराधी ठहराते हैं) उनको आप तीव्र दण्ड दीजिए। ६. १६. ३१

व्यभिचारी आदिकों को तीव्र दण्ड

(१०) जो सेना तथा प्रजा के विरोधी हों, तथा डाकू, चोर, खोटे वचन बोलने हारे, मिथ्यावादी, व्यभिचारी मनुष्य होवें उनको अग्नि से जलाने आदि भयङ्कर दण्डों से शीघ्र ताड़ना देकर वश में करें। ११. ७७

(११) हे राजन! जो विषय वासनामें रमते हुए जन या स्त्रियें व्यभिचार को बढ़ावें उन २ को प्रबल दण्ड से शिक्षा देनी चाहिए। २३. २१

---

* * * * * * *

कार्षापणं भवेद्दण्ड्यो यत्रान्यः प्राकृतो जनः।
तत्र राजा भवेद्दण्ड्यः सहस्रमिति धारणा॥ मनु०

जहां किसी अपराध पर कोई प्रजाजन एक रुपया दण्ड का भागी हो, वहां उसी अपराध पर राजा हज़ार रुपये दण्ड का भागी हो—यह न्याय व्यवस्था है।

* सप्तम खण्ड *

स्वामी जी की कुछ जीवन घटनायें

यह घटनायें आज कल के असहयोग आन्दोलन में स्वराज्याभिलाषियों के लिये बड़े महत्व की हैं, अतः यहां दीजाती हैं।

सत्य के लिये कारावास प्रशंसनीय है

(१) अजमेर में स्वामी जो से ईसाई पादरी शूलब्रेड ने चिड़ कर कहा कि ऐसी बातों से आप कभी कारावास में चले जावेंगे। स्वामी जी ने गम्भीरता से मुसकराते हुए कहा "सत्य के लिये कारावास कोई लज्जाजनक वार्ता नहीं। धर्म पथ पर आरूढ़ होकर मैं ऐसी बातों से सर्वथा निर्भय होगया हूं। प्रतिपक्षी लोग यदि अपने प्रभाव से ऐसा कष्ट दिलायेंगे, तो जहां कष्ट सहते हुए मेरे चित्त में शोक का कोई तरंग भी उत्पन्न न होगा वहां मैं अपने प्रतिपक्षियों की अकल्याण कामना भी कभी नहीं करूंगा। पादरी जी! मैं लोगों के डराने से सत्य को नहीं छोड़ सकता। ईसा को भी लोगों ने फांसी पर लटका ही तो दिया था"। ८१ पृ०

(२) जोधपुर जाते समय शाहपुर के आर्य लोगों ने

सत्य के लिये आत्म बलिदान

स्वामी जी से कहा जहां आप जारहे हैं वहां के लोग कठोर प्रकृति के हैं। कहीं ऐसा न हो कि सत्योपदेश से चिड़कर श्रीचरणों को पीड़ा पहुंचावें। स्वामी जी ने उत्तर दिया "यदि लोग हमारी अंगुलियों को बत्तियां वनाकर जलादें तो भी कोई चिन्ता नहीं। मैं वहां जाकर अवश्य सत्योपदेश दूंगा" ४६६ पृ०

स्वामी जी की असीम सहनशीलता, तथा अहिंसा वृत्ति

(३) स्वामी जी को उन के पाचक जगन्नाथ ने लालच वश भोजन में विष दे दी, इसी से उनकी शीघ्र मृत्यु हुई। जब स्वामी जी को विष दान का पता लगा तो उन्होंने पाचक को कहा "जगन्नाथ! मेरे इस समय मरने से मेरा कार्य सर्वथा अधूरा रह गया। तुम नहीं जानते कि इस से लोक हित की कितनी भारी हानि हुई है। अच्छा, विधाता के विधान में ऐसा ही होना था। इसमें तुम्हारा भी क्या दोष है। जगन्नाथ! लो, ये कुछ रुपये हैं, मैं तुम्हें देता हूं, तुम्हारे काम आवेंगे। परन्तु जैसे भी हो राठौर राज्य की सीमा के पार होजावो। नेपाल राज्य में जा छिपने से ही तुम्हारे प्राणों का परित्राण हो सकता है। यदि यहां के नरेश को घुणाक्षर न्याय से भी इस वात का पता लग गया तो वे तुम्हारा बिन्दुविसर्ग तक विनष्ट करके ही विश्राम लेंगे। उनके प्रकोप के उत्ताप से तुम्हारा कोई भी परित्राण न कर सकेगा। जगन्नाथ! अब देर न करो। जाओ चुपचाप भाग जाओ।

देखना, किसी को स्थाली पुलाक न्याय से भी तुम्हारा कर्म ज्ञात न होजावे। मेरी ओर से सर्वथा निश्चिन्त रहना। इस हृदय सागर से तुम्हारा यह भेद किसी प्रकार कभी भी प्रकाशित न होगा। ५१७ पृ०

स्वामी जी की निर्भयता

(४) एक दिन जब स्वामी जी जोधपुराधीश को मिलने गये तो वहां नन्हीजान वेश्या आई हुई थी। उसको देखकर स्वामी जी ने महाराजा को धर्मोपदेश करते समय इस तरह ताड़ना दी "राजन्! राजा लोग सिंह समान समझे जाते हैं। स्थान २ पर भटकने वाली वेश्या कुतिया के सदृश हैं। वीर शार्दूल का कृपणा कुतिया पर प्रेम करना और आसक्त हो जाना सर्वथा अनुचित है। आर्य जाति की कुल मर्यादा के विपरीत है। केसरी की कन्दरा में ऐसी कल्मष-कलुषित कुक्करी के आगमन का क्या काम है? इस कुव्यसन के कारण धर्म कर्म भ्रष्ट होजाता है। मान मर्यादा को बट्टा लगता है। इस पाप-सोपान पर प्रथम पदार्पण करते हो पुनः पद पद पर पुरुष का अधःपतन आप ही आप होता चला जाता है। इस दुर्व्यसन को तिलाञ्जलि दे देनी चाहिए। ५११ पृ०

(५) एक वार स्वामी जी सोरों में पाप कर्मों का खण्डन कर रहे थे। एक हृष्ट पुष्ट दीर्घकाय मनुष्य रौद्ररूप धारण किये हुए और एक बड़ा मोटा लट्ठ लिये हुए भरी सभा को चीर कर आगे बढ़ा और बोला अरे साधु! तू हमारे देवताओं

का खण्डन करता है झट पट बता, तेरे किस अंग पर यह सोटा मार कर तेरी समाप्ति कर दूं। पर स्वामी जी ने प्रशान्त स्वभाव से मुस्कराते हुए उत्तर दिया "भद्र! यदि तेरे विचार में मेरा धर्मप्रचार करना कोई अपराध है तो इस अपराध का प्रेरक मेरा मस्तिष्क ही है। यही मुझे खण्ड़न की बातें सुझाता है। सो यदि तू अपराधी को दण्ड देना चाहता है तो मेरे सिर पर सोटा मार, इसी को दण्डित कर"। १२५ पृ.

स्वदेशी मोटे वस्त्र पहनने में ही शोभा है

(६) अलीगढ़ में एक दिन ठाकुर ऊधोसिंह अपने पिता के साथ स्वामी जी से मिलने आये। उसके कपड़े विदेशी थे। उस पर स्वामी जी ने कहा "ऊधव! देखो तुम्हारे पिता कैसे मोटे, सादे और अपने देश के कपड़े के बने वस्त्र पहरते हैं। उनका जाति बिरादरी में कितना अधिक सम्मान है। क्या तुम इस विदेशी कपड़े से बने नये वेष से विभूषित होकर अपने पिता से अधिक सत्कृत हो गये हो? ऊधव, अपने ही देश के वस्तुवेष को अपनाने में शोभा है"। २२४ पृ.

(७) देखो, (युरोपियन) अपने देश के बने हुए जूते को कार्यालय और कचहरी में जाने देते हैं इस देशी जूते को नहीं। इतने ही में समझ लो कि अपने देश के बने जूतों की भी जितनी मान प्रतिष्ठा करते हैं उतनी भी अन्य देशस्थ मनुष्यों की नहीं करते। देखो, सौ वर्ष से कुछ ऊपर इस देश में आये युरोपियनों को हुए, और आज तक ये लोग मोटे कपड़े आदि पहरते हैं जैसा कि स्वदेश में पहरते थे, परन्तु उन्हों ने अपना

चालचलन नहीं छोड़ा । और तुम में से बहुत से लोगों ने उनका अनुकरण कर लिया । इसी से तुम निर्बुद्धि और वे बुद्धिमान् ठहरते हैं । सत्यार्थ० ३६६ पृ.

(८) स्वामी जी ने अपनी सारी सम्पत्ति परोपकारिणी सभा अजमेर के नाम वसीयत नामे में लिखी हुई है । उस वसीयत नामे में १२ वां आदेश यह है "यदि इस स्वीकारपत्र के विषय में कोई झगड़ा उठे तो उसको राजगृह में न ले जाना चाहिए । किन्तु जहां तक होसके यह सभा अपने आप उसका निर्णय करे । यदि आपस में किसी प्रकार निर्णय न हो सके तो फिर न्यायालय से निर्णय होना चाहिए" । ४६१ पृ.

न्यायालय में न जाना

(९) आर्य समाज के उपनियमों में ३९ वां उपनियम स्वामी जी ने इस प्रकार रक्खा है "यदि आर्य समाज में किसी का आपस में झगड़ा हो तो उनको योग्य होगा कि वे उसको आपस में समझलें, वा आर्यसमाज की न्याय—उपसभा द्वारा उसका न्याय करालें" ।

(१०) हरिद्वार एक सज्जन ने स्वामी जी से कहा "यदि आप अपनी पुस्तकों का अनुवाद कराकर फारसी अक्षरों में छपवादें, तो पञ्जाव आदि प्रान्तों में जो लोग नागरी अक्षर नहीं जानते उनको आर्य धर्म के जानने में बड़ी सुविधा हो जावे" स्वामी जी ने उत्तर दिया "अनुवाद तो

भारत की राष्ट्रभाषा आर्य भाषा होनी चाहिए

विदेशियों के लिये हुआ करता है। नागरी के अक्षर थोड़े दिनों में सीखे जा सकते हैं। आर्यभाषा का सीखना भी कोई कठिन काम नहीं। फारसी और अरबी के शब्दों को छोड़ कर, ब्रह्मावर्त की सभ्यभाषा ही आर्य भाषा है। यह अति कोमल और सुगम है। जो इस देश में उत्पन्न होकर अपनी भाषा के सीखने में कुछ भी परिश्रम नहीं करता, उससे और आशा क्या की जा सकती है? उसमें धर्म-लग्न है, इसका भी क्या प्रमाण है? आपतो अनुवाद की सम्मति देते हैं, परन्तु दयानन्द के नेत्र तो वह दिन देखना चाहते हैं जब, काश्मीर से कन्या कुमारी तक और अटक से कटक तक नागरी अक्षरों का ही प्रचार होगा। मैनें आर्यावर्त भर में भाषा का ऐक्य संपादन करने के लिये ही, अपने सकलग्रन्थ आर्य भाषा में लिखे और प्रकाशित किये हैं। ३६४ पृ.

स्वामी जी के मार्ग पर चलने से स्वराज्य लाभ

(११) एक स्थान पर स्वामी जी का भाषण सुन कर वहां के कलेक्टर ने कहा कि आपके भाषण पर यदि लोग चलने लग जावें तो इसका यह परिणाम निकलेगा कि हमें अपना बदना-बोरिया बांधना पड़ेगा। ४२१ पृ.

——:०:——

अभयं मित्रादभयम मित्रा दभयं ज्ञाता दभयं पुरोयः ।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥

मित्र से अभय हो शत्रु से अभय हो; प्रत्यक्ष वस्तु से अभय हो, परोक्ष वस्तु से अभय हो; हमारे लिये रात्रि भय शून्य हों, दिन भयशून्य हो, सब दिशा उपदिशायें मेरी मित्र हो । अर्थात्, हे भय निवारक ! दयासागर ! परमेश्वर ! हम संसार में मित्र, शत्रु आदि किसी से भी कभी न डरें। हम आपके सामर्थ्य से इतने पवित्र बन जावें कि आपसे भी कभी भयभीत होने की आवश्यकता न रहे। हम अपने अमर आत्मा को अमर ही समझें, जिसको तलवार काट नहीं सकती, तोप उड़ा नहीं सकती, आग जला नहीं सकती, और कारागार में कैद नहीं हो सकती। हे महाराजाओं के महाराजा ! जिसके हृदय में आपने अपनी राजधानी बनाली हो, तो फिर सारे भूमण्डल में कौन है जो उसकी ओर डराने के भाव से अपनी आंख भी उठा सके। हम महाराजाधिराज और शासकों के शासक आपकी आज्ञा से कभी विचलित न हों, और सदा आपके आज्ञप्त स्वराज्य का भोग करें।

॥ इति ॥

❋ सुभाशित ❋

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतुगच्छतु वा यथेष्टम् ।

अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥ भर्तृहरि

नीति कुशल निन्दा करें चाहे स्तुति करें, असीम वैभव प्राप्त हो चाहे समूल नष्ट हो, मृत्यु आज ही हो चाहे दूसरे युग में हो, परन्तु न्याययुक्त मार्ग से धीर जन एक पग भी विचलित नहीं होते ।

सर्वं परवशं दुःखं सर्वं मात्मवशं सुखं ।
एताद्विद्यात्समासेन लक्षणं सुख दुःखयोः ॥ मनु०

सब प्रकार की पराधीनता दुःख है, और सब प्रकार की स्वाधीनता सुख है—इस को संक्षेप से सुख दुःख का लक्षण समझो ।

वंश लक्ष्मी मनुद्धृत्य समुच्छेदेन विद्विषाम् ।
निर्वाणमपि मन्ये ऽहमन्तरायं जयश्रियः ॥ भारविः

शत्रुओं का नाश करके उनके हाथ में गई हुई वंश लक्ष्मी का उद्धार किये बिना मैं तो मोक्ष को भी विजय लक्ष्मी के लिये एक विघ्न ही मानता हूं ।

———